सम्राट अशोक के अभिलेख

सम्राट अशोक के अभिलेख

विषयानुक्रमणिका

सम्राट अशोक : संक्षिप्त परिचय ..... [i]
संकेतचिन्ह ..... [ix]

खंड १ (शिला अभिलेख)

मूल अभिलेख + हिंदी रूपांतर

गिरनार शिला प्रथम अभिलेख २
गिरनार शिला द्वितीय अभिलेख २
गिरनार शिला तृतीय अभिलेख ४
गिरनार शिला चतुर्थ अभिलेख ४
कालसी शिला पंचम अभिलेख ६
गिरनार शिला षष्ठ अभिलेख ८
गिरनार शिला सप्तम अभिलेख १०
गिरनार शिला अष्टम अभिलेख १०
गिरनार शिला नवम अभिलेख १२
गिरनार शिला दशम अभिलेख १४
गिरनार शिला एकादश अभिलेख १४
गिरनार शिला द्वादश अभिलेख १६
शाहबाजगढ़ी शिला त्रयोदश अभिलेख १८
गिरनार शिला चतुर्दश अभिलेख २२
धौली शिला प्रथम पृथक अभिलेख २२
जौगड शिला द्वितीय पृथक अभिलेख २६

खंड २ (लघु शिला अभिलेख)

मूल अभिलेख + हिंदी रूपांतर

लघु शिला: रूपनाथ ३४
लघु शिला: क्केलकाता-बैराट ३६
लघु शिला: ब्रह्मगिरि ३६

खंड ३ (लघु स्तंभ अभिलेख)

मूल अभिलेख + हिंदी रूपांतर

लघु स्तंभ: सारनाथ ४२
लघु स्तंभ: रुम्मिनदेई ४४
लघु स्तंभ: निगली सागर ४४

खंड ४ (स्तंभ अभिलेख)

मूल अभिलेख + हिंदी रूपांतर

स्तंभ: देहली-टोपरा प्रथम अभिलेख ४८
स्तंभ: देहली-टोपरा द्वितीय अभिलेख ४८
स्तंभ: देहली-टोपरा तृतीय अभिलेख ५०
स्तंभ: देहली-टोपरा चतुर्थ अभिलेख ५०
स्तंभ: देहली-टोपरा पंचम अभिलेख ५२
स्तंभ: देहली-टोपरा षष्ठ अभिलेख ५४
स्तंभ: देहली-टोपरा सप्तम अभिलेख ५६

खंड ५ (गुहा बराबर)

मूल अभिलेख + हिंदी रूपांतर

प्रथम अभिलेख ६४
द्वितीय अभिलेख ६४
तृतीय अभिलेख ६४

शब्द-विवेचन

शिला अभिलेख ६९
लघु शिला अभिलेख ११०
लघु स्तम्भ अभिलेख ११९
स्तम्भ अभिलेख १२३
गुहा अभिलेख १४४

परिशिष्ट

१. लघु शिला कंधार अभिलेख (केवल अनुवाद) १४७
२. सम्राट अशोक के अभिलेखों के प्राप्ति-स्थल १४८

विपश्यना साधना केंद्र १५१

"मुनिसानं चु या इयं धंमवढि वढिता दुवेहि येव
आकालेहि धंमनियमेन च निझतिया च
"तत चु लहु से धंमनियमे निझतिया व भुये"।

[मनुष्यों में जो धर्म की बढ़ोतरी हुई है वह दो प्रकार से हुई है - धर्म के नियमों से और (विपश्यना) ध्यान करने से।

और इनमें धर्म के नियमों से कम और (विपश्यना) ध्यान करने से कहीं अधिक (हुई है।)]

– स्तंभ देहली-टोपरा : सप्तम अभिलेख

सम्राट अशोक : संक्षिप्त परिचय

भारतवर्ष के लिए यह अत्यंत गौरव की बात है कि उसकी धरती पर जन्मे सम्राट अशोक का नाम केवल भारत ही नहीं, बल्कि विश्वभर में, बहुत ही आदर के साथ लिया जाता है। ब्रिटेन के सुप्रसिद्ध लेखक एच. जी. वेल्स ने अशोक की गणना विश्व इतिहास के छः महानतम व्यक्तियों में की है। यूनेस्को कलिंग प्राईज १९८५ के लारिएट सर एग्गरमोंट ने इसके बारे में अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा: 'अशोक को आज विश्व का सम्राट होना चाहिए था।' इसी विभूति का संक्षिप्त परिचय नीचे की चंद पंक्तियों में दिया जा रहा है।

अशोक के जीवन के बारे में मुख्य-मुख्य जानकारी निम्न स्रोतों से मिलती है - १. दिव्यावदान (असोकावदान) २. दीपवंस ३. महावंस ४. पुराण ५. सम्राट अशोक के शिलाओं तथा स्तंभों पर उत्कीर्ण अभिलेख

सम्राट के प्रारंभिक जीवन के बारे में अनेक दंतकथाएं भी प्रचलित हैं पर इनमें से कितनी ही निःसार प्रतीत होती हैं। इनमें से कुछ तो भारतीय मूल की हैं और शेष अधिकतर श्रीलंका से प्रसरित हुई हैं। एक कथा के अनुसार अशोक पहले बड़े चंड स्वभाव का था, पर बाद में भगवान बुद्ध की शिक्षा को अपनाने से बड़ा धार्मिक व्यक्ति बन गया। इस प्रकार वह 'चंडाशोक' से 'धम्माशोक' बन गया।

सम्राट के जीवन के घटनाक्रम के बारे में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। फिर भी प्रायःकर वे सभी इसका प्रामाणिक स्रोत उन अभिलेखों को तो मानते ही हैं जिन्हें अशोक ने अपने शासनकाल में समय समय पर अपने विशाल साम्राज्य में महत्त्वपूर्ण स्थानों पर शिलाओं तथा स्तंभों पर उत्कीर्ण करवाया था। स्वर्गीय श्री रवींद्रनाथ टैगोर का भी चिंतन है कि सम्राट अशोक ने चट्टानों पर लेख इसीलिए खुदवाये कि वह जो आवाज इनमें भरे वही आवाज सदियों तक लोगों के श्रवणगोचर होती रहे। इन अभिलेखों को पढ़ते समय बहुत बार सचमुच ऐसे लगने लगता है मानों अशोक स्वयं अपनी धर्मलिपि पढ़ कर हमें सुना रहा हो।

अशोक मौर्य वंश का तीसरा बड़ा सम्राट था। चंद्रगुप्त इसके पितामह और बिंदुसार इसके पिता थे। शासन की बागडोर संभालने से पहले अपने पिता के

जीवनकाल में यह अवन्ति नाम के जनपद का प्रशासक रह चुका था जिसकी राजधानी उज्जयिनी (उज्जैन) थी। उस समय यह अठारह वर्ष का ही था। इस प्रकार बाल्यकाल से ही इसे प्रशासन का अच्छा-खासा अनुभव हो गया था जो बाद में इसके लिए बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ।

अशोक का जन्म ईसापूर्व ३०४ में हुआ था। मास्की में पाये गये अभिलेख से इसका नाम 'असोक' होना विदित होता है, अन्यथा अन्य अभिलेखों में इसे 'देवानंपिय' अथवा 'पियदस्सी राजा' कहा गया है। ये दोनों अशोक के नाम न होकर उसकी मानोपाधियां थीं, जैसे आजकल 'His Majesty'।

अशोक की पहली पत्नी का नाम देवी था जिससे इसे पुत्र महेंद्र और पुत्री संघमित्रा संतान के रूप में प्राप्त हुए। दूसरी पत्नी कारुवाकी से इसे तीवर नाम का पुत्र प्राप्त हुआ। असंधिमित्रा इसकी अग्रमहिषी मानी जाती है। दिव्यावदान के अनुसार धर्मविवर्धन (कुणाल) नाम का पुत्र पद्मावती की कोख से हुआ था। एक अभिलेख में अशोक के पौत्र दशरथ का नाम आता है जिसने अशोक की मृत्यु के उपरांत राजपाट भी संभाला था। महेंद्र और संघमित्रा भगवान बुद्ध की शिक्षा का प्रसार करने के उद्देश्य से श्रीलंका देश में चले गये थे।

यदि श्रीलंका के इतिवृत्तों पर विश्वास किया जाय तो यह मानना होगा कि अशोक के सिंहासन पाने और उसका राज्याभिषेक होने के बीच चार वर्षों का अंतराल रहा। इसके लिए एक तर्क यह दिया जाता है कि उसे उत्तराधिकार के लिए युद्ध में जूझते रहना पड़ा। उसका राजतिलक ईसापूर्व २७० में हुआ था।

अशोक को विरासत में इतना बड़ा साम्राज्य मिला जो आज के भारत से कहीं विशाल था। उसके राज्य की सीमाएं वर्तमान अफ़गानिस्तान से मैसूर तक फैली हुई थीं और उत्तर में नेपाल भी उसके राज्य तले था। उसने अपने जीवनकाल में एक ही युद्ध लड़ा जिसे कलिंग का युद्ध कहते हैं। यह राज्याभिषेक के नौवें वर्ष में लड़ा गया। इसमें एक लाख लोग कत्ल हुए, डेढ़ लाख लोगों को बंदी बनाया गया और इससे भी ज्यादा लोग मारे गये। लगभग चार लाख लोग घायल हुए। इस नर-संहार और अपार क्षति से अशोक का दिल दहल गया। वह संतापित हो उठा और इसके पश्चाताप के तौर पर उसने भविष्य में कोई युद्ध न लड़ने की अटल प्रतिज्ञा की और आगे के लिए अहिंसा और धार्मिक सहिष्णुता को अपने जीवन का मूलमंत्र बना लिया। अशोक ने

अहिंसा की प्रतिज्ञा वर्तमान उड़ीसा की राजधानी भुवनेश्वर के पास धौली नामक स्थान पर ली थी। वहां पर आजकल एक शांति-स्तूप भी बना हुआ है।

अशोक ने धार्मिक गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए एक सरकारी विभाग बनाया जिसके अंतर्गत 'धर्ममहामात्र' नियुक्त किये गये। इनके जिम्मे बहुत महत्त्व के काम सौंपे गये। इनकी विस्तृत जानकारी अशोक के संबंधित अभिलेखों को पढ़ने से होगी। इस कार्य में महिलाओं को भी भूमिका अदा करने के लिए दी गयी थी। इन्हें स्त्यध्यक्ष महामात्र कहते थे। जन जन का कल्याण करने वाले इस प्रकार के पद का सृजन विश्व के इतिहास में प्रथम बार सम्राट अशोक ने ही किया था।

ईसापूर्व २६० तक अशोक की बुद्ध के प्रति श्रद्धा अगाध हो चुकी थी, अतः वह पहली बार धर्मयात्रा पर निकला। उसके बाद उसने अनेक धर्मयात्राएं कीं जिनका उल्लेख जनश्रुतियों तथा अभिलेखों में पाया जाता है। मथुरा-निवासी उपगुप्त अशोक का आचार्य था। उसके नेतृत्व में अशोक ने एक विशाल सेना के साथ बौद्ध तीर्थों की यात्रा की थी। मुख्य स्थान थे भगवान की जन्मस्थली लुंबिनी, महाभिनिष्क्रमण का स्थान कपिलवस्तु, संबोधि प्राप्त करने का स्थान बोधगया, धर्मचक्रप्रवर्तन करने का स्थान इसिपतन (सारनाथ), महापरिनिर्वाण प्राप्त करने का स्थान कुशीनगर। कतिपय अन्य स्थानों की यात्रा किया जाना भी पाया जाता है। अशोक ने यह भी स्पष्ट किया है कि आखिर इन धर्मयात्राओं का प्रयोजन क्या था। इसके लिए कृपया देखें गिरनार शिला का अष्टम अभिलेख।

अशोक ने अपने शासनकाल में पाटलिपुत्र में एक धर्म-संगीति भी बुलाई थी जो बड़े ऐतिहासिक महत्त्व की थी। भगवान बुद्ध के महापरिनिर्वाण के पश्चात यह तीसरी संगीति थी जो ईसापूर्व २५१ में संपन्न हुई। इसकी अध्यक्षता आचार्य मोग्गलिपुत्त तिस्स ने की थी। इस संगीति के उपरांत विदेशों में धर्मप्रसार के उद्देश्य से अनेक स्थविरों को भेजा गया जिसके फलस्वरूप ही

आज के एशियाई देशों में बुद्ध की शिक्षा में विश्वास रखने वाले लोग बहुत बड़ी संख्या में मिलते हैं।

किस देश में किस स्थविर को भेजा गया, इसकी तालिका नीचे दी गयी है-

स्थविर	देश
१. मज्झन्तिक	काश्मीर एवं गंधार
२. महारक्षित	यवन (यूनान)
३. मज्झिम	हिमालय देश
४. धर्मरक्षित	अपरांतक
५. महाधर्मरक्षित	महाराष्ट्र
६. महादेव	महिषमंडल (मेसूर या मांधाता)
७. रक्षित	वनवासी (उत्तर कन्नड)
८. सोण वा उत्तर	सुवर्णभूमि (पेगू तथा मौलमीन)
९. महेंद्र	श्रीलंका (सिंहल)

जनसाधारण के लिए अशोक ने बहुत से कल्याणकारी कदम उठाये। उदाहरणस्वरूप, उसने पथिकों के लिए रास्तों पर घने छायादार पेड़ लगवाये जिनके नीचे मनुष्य एवं पशु विश्राम कर सकें। थोड़ी-थोड़ी दूरी पर पानी पीने के कुएं खुदवाये। मार्गों पर यात्रियों के ठहरने के लिए धर्मशालाएं निर्मित करवायीं। औषधि के काम आने वाली पेड़-पौधों की नर्सरियां बनवायीं। अस्पताल खुलवाये। दवाइयों का प्रबंध करवाया। पशुओं की चिकित्सा के लिए भी अस्पताल खुलवाये। राजकीय शिकार पर रोक लगायी। अन्यथा भी पशुओं के वध को प्रतिबंधित किया। किन्हीं विशेष अवसरों पर विशेष जानवरों के वध पर रोक लगायी।

सम्राट अशोक के अभिलेखों से अनेक प्रकार के संदेश मिलते हैं:

नैतिकता को बढ़ावा देने से संबंधित, जैसे अहिंसा को प्रश्रय देना, चरित्र-निर्माण, सहिष्णुता, दूसरों के विचारों का सम्मान, माता-पिता का

सम्मान, अपने आचार्य, मित्र, संबंधी, धर्मगुरु का सम्मान, दासों तथा भृत्यों के प्रति सम्मान, सच बोलना, इत्यादि।

आज का भारत भी सम्राट अशोक को इस रूप में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित कर रहा है कि उसने अपना राष्ट्रीय चिह्न अशोक द्वारा निर्मित एक स्तंभविशेष के शीर्षभाग को बनाया है। यह स्तंभ वाराणसी के निकट सारनाथ में किये गये उत्खनन के परिणामस्वरूप प्राप्त हुआ था। अभी यह सारनाथ ही के संग्रहालय में रखा हुआ है। स्तंभ की विशेषताएं इस प्रकार हैं;

- ऊंचाई लगभग पचास फीट
- पाषाण के एकल खंड से निर्मित
- इसकी पालिश २,३०० वर्ष के बाद आज भी वैसी ही चमकदार
- इसके ऊपर की गयी कारीगरी उस समय की उत्कृष्ट कलाकृति की एक बेजोड़ मिसाल
- इसके शीर्ष भाग पर चार सिंहों का एक दूसरे के साथ पीठ सटाये बैठे होना
- सिंहों के नीचे हाथी, बैल और घोड़ा - इन तीनों की विद्यमानता
- हाथी, बैल और घोड़े के बीचोंबीच एक 'धर्मचक्र' का अंकन

[यह 'धर्मचक्र' भगवान बुद्ध द्वारा प्रज्ञप्त उन चौबीस प्रत्ययों का सूचक प्रतीत होता है जिनसे यह सृष्टि का व्यापार चलता है।]

सम्राट अशोक की प्रसिद्धि जिन कारणों से है, वे हैं:

- कुशलतम प्रशासन
- नगरों का निर्माण
- बहुत बड़ी संख्या में विहारों, स्तंभों एवं स्तूपों का निर्माण
- प्रस्तर शिलाओं और स्तंभों पर प्रजाजन एवं अधिकारीवर्ग के निमित्त अपने आदेशों, अनुदेशों, अपेक्षाओं का उत्कीर्णन
- पत्थरों पर कलाकारी
- समाज सेवा के कार्य
- लोगों में 'विपश्यना ध्यान' की प्रवृत्ति जगाना

यह ज्ञातव्य है कि अशोक ने अत्यल्प काल में ही अपने साम्राज्य में यत्र तत्र ८४,००० स्मारक खड़े करवा दिये थे। यह मान्यता है कि भगवान बुद्ध एवं उनके प्रमुख शिष्यों के उपदेशों की संख्या इतनी ही होने के कारण उसके द्वारा ८४,००० स्मारकों का निर्माण-कार्य हाथ में लिया गया था।

सम्राट अशोक द्वारा शिलाओं, स्तंभों, गुफाओं पर उत्कीर्ण अभिलेखों की संख्या ४२ तक पहुँच चुकी है। इनमें से ३६ भारत में, २ नेपाल में, २ पाकिस्तान में और २ अफगानिस्तान में हैं। अफगानिस्तान में पाये गये अभिलेख 'खरोष्ठी' लिपि में हैं। इन सभी अभिलेखों को ऐसे स्थानों पर उत्कीर्ण किया गया था जहां पर अधिक-से-अधिक लोगों का ध्यान इनकी ओर आकृष्ट हो सके। विद्वानों ने अभिलेखों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया है:

- शिला अभिलेख (गिरनार, कालसी, मानसेहरा, धौली, जौगड़, इत्यादि)
- लघुशिला अभिलेख (रूपनाथ, सहसराम, बैराठ, ब्रह्मगिरि, इत्यादि)
- स्तंभ अभिलेख (टोपरा, देहली-मेरठ, कौसांबी, इत्यादि)
- लघुस्तंभ अभिलेख (सांची, सारनाथ, रुम्मिनदेई, इत्यादि)
- गुहा अभिलेख (बराबर)

सम्राट अशोक के शिलाओं, स्तंभों, इत्यादि पर खुदे हुए अभिलेख अधिकतर 'ब्राह्मी' लिपि में हैं जो आजकल प्रचलित देवनागरी लिपि की जननी है। इनकी भाषा मुख्यतया 'पालि' है जो उस समय उत्तर भारत में बोलचाल की भाषा थी। उस समय की पालि के तीन भेद मिलते हैं जो इस प्रकार हैं: १. पंजाबी, २. उज्जेनी, तथा ३. मागधी।

इन अभिलेखों की खोज से पहले लोग अशोक को भूल चुके थे। इन अभिलेखों के कारण ही उनका अस्तित्व प्रकाश में आया है। अभिलेखों की खोज और उन पर अनुसंधान करने का कार्य प्रायःकर विदेशी विद्वानों के कारण ही संभव हो पाया है। फादर टीफेनथालर ने देहली-मेरठ स्तंभ अभिलेख की खोज सन १७५० ईस्वी में की थी। इसके अर्थ को जेम्स प्रिंसेप ने सन १८३७ ई० में सुनिश्चित किया था। इसके बाद तो बहुत से विद्वान समय समय पर इस कार्य में जुटते चले गये। इनमें से कुछेक नाम इस प्रकार हैं: ए. कनिंघम, एमिल सेना, ई. हार्डी, जार्ज ब्यूलर, ई. हुल्ज, विंसेंट स्मिथ, ए.सी.वूलनर, एच. कर्न, एग्गरमोंट, इत्यादि। भारतीय विद्वानों ने भी इस कार्य

में काफी योगदान दिया है। कुछ प्रसिद्ध नाम हैं: डी.आर. भांडारकर, डी.सी. सरकार, राधाकुमुद मुखर्जी, बी.सी. लाहा, बी.एम. बरुआ, ए.सी. सेन, आर.जी. बसाक, सी.एस. उपासक, राजबली पांडे, इत्यादि।

पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि भारत और उससे बाहर के देशों में सम्राट अशोक के अभी तक ४२ अभिलेख खोजे जा चुके हैं। इस अभिलेखों में सम्राट के जो अनुदेश अंकित हैं उनकी जानकारी हर किसी को होना नितांत आवश्यक है। इसी उद्देश्य से इस पुस्तिका को प्रकाश में लाया गया है।

अभिलेखों को उत्कीर्ण करने के प्रयोजन से काम में लिए गये अनेक शिलाखंड अथवा स्तंभ क्षतिग्रस्त हो जाने से उन्हें भाषानुवाद हेतु नहीं चुना गया है। अधिकतर उन्हीं अभिलेखों का चयन किया गया है जो स्पष्ट रूप से पढ़ने में आते हैं। इनके मात्र एक-दो अपवाद अवश्य हैं। किसी भी अभिलेख को छोड़ा नहीं गया है। इस प्रकार सम्राट अशोक द्वारा जो कुछ प्रज्ञप्त किया गया है उसे पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है। अभिलेखों का रूपांतरण सरल भाषा में किया गया है जिससे सर्वसाधारण की समझ में आ जाय। अत्यावश्यक होने पर ही किन्हीं किन्हीं संदर्भों की संक्षिप्त व्याख्या की गयी है।

निदेशक

विपश्यना विशोधन विन्यास

संकेतचिन्ह

अनेकार्थसंग्रह	अनेकार्थ०
अभिधानचिन्तामणि	अभिधान०
अभिधानचिन्तामणिपरिशिष्ट	अभिधान०परिशिष्ट
अभिधानचिन्तामणिशिलोञ्छः	अभिधान०शिला
अमरकोष	अमर०
अव्यय	अव्य०
उपसर्गार्थचन्द्रिका	उपसर्गार्थ०
एकादशीतत्त्वम्	एकादशी०
कविकल्पलता	कवि०
चरियापिटक	चरिया०
चाणक्यशतक	चाणक्य०
चुल्लनिद्देसपालि	चुल्ल०
त्रिकाण्डशेष	त्रिकाण्ड०
द्विरूपकोष	द्विरूप०
धातुपाठ (पाणिनि)	धातुपाठ०
नपुंसकलिङ्ग	न०
निघण्टुशेष (हेमचन्द्रविरचित)	निघण्टु०
निरुक्त	नि०
पञ्चतन्त्र	पञ्च०
पाराजिकपालि	पाराजिक०
पुँल्लिंग	पुँ.
बहुवचन	ब. व.
ब्रह्मपुराण	ब्रह्मपु०
ब्रह्मवैवर्त	ब्रह्म०
भावप्रकाश	भाव०
मनुस्मृति	मनु०
महाभारत	महाभा०

मालतीमाधव	मालती०
मालविकाग्निमित्र	मालविका०
मुद्राराक्षस	मुद्रा०
मेदिनीकोष	मेदिनी०
रामायण	रामा०
वशिष्ठहारीतवचन	वशिष्ठ०
वेणीसंहार	वेणी०
वैद्यकरत्नमाला	वैद्यक०
शतपथब्राह्मण	शतपथ०
शब्दरत्नप्रदीप	शब्दरत्न०
शब्दस्तोममहानिधि	शब्द०
शिष्टोपदेश:	शिष्ट०
संस्कृत	सं०
संस्कृतशब्दार्थकौस्तुभ	संस्कृत०
सद्धर्मसङ्ग्रह	सद्धर्म०
समन्तपासादिका	समन्त०
साहित्यदर्पण	साहित्य०
सुत्तविभङ्ग	सुत०
स्त्रीलिङ्ग	स्त्री०
हलायुधकोष	हलायुध०
हारावली	हारा०
हितोपदेश	हितोप०
Latin	Lat

खंड (१)

शिलाओं पर उत्कीर्ण अभिलेख

मूल अभिलेख

गिरनार शिला : प्रथम अभिलेख

१. इयं धंमलिपी देवानंप्रियेन प्रियदसिना राञ्ञा लेखापिता

२. इध न किंचि जीवं आरभित्पा प्रजूहितव्यं

३. न च समाजो कतव्यो

४. बहुकं हि दोसं समाजम्हि पसति देवानंप्रियो प्रियदसि राजा

५. अस्ति पि तु एकचा समाजा साधुमता देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो

६. पुरा महानसम्हि देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो अनुदिवसं बहूनि प्राणसतसहस्रानि आरभिसु सूपाथाय

७. से अज यदा अयं धंमलिपी लिखिता ती एव प्राणा आरभरे सूपाथाय द्वो मोरा एको मगो सो पि मगो न ध्रुवो

८. एते पि त्री प्राणा पछा न आरभिसरे

गिरनार शिला : द्वितीय अभिलेख

१. सर्वत विजितम्हि देवानंप्रियस पियदसिनो राञो एवमपि प्रचंतेसु यथा चोडा पाडा सतियपुतो केतलपुतो आ तंवपंणी अंतियको योनराजा ये वा पि तस अंतियकस सामीपं राजानो सर्वत्र देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो द्वे चिकीछ कता मनुसचिकीछा च पसुचिकीछा च

२. ओसुढानि च यानि मनुसोपगानि च पसोपगानि च यत यत नास्ति सर्वत्रा हारापितानि च रोपापितानि च

३. मूलानि च फलानि च यत यत्र नास्ति सर्वत हारापितानि च रोपापितानि च

४. पंथेसु कूपा च खानापिता व्रछा च रोपापिता परिभोगाय पसुमनुसानं

हिंदी रूपांतर

गिरनार शिला : प्रथम अभिलेख

१. यह धर्मलिपि देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा लिखवायी गयी है।

२. यहां किसी जीव को मार कर होम नहीं किया जाना चाहिए।

३. और न ही इन्द्रियलोलुपता को बढ़ावा देने वाला उत्सव किया जाना चाहिए।

४. क्योंकि ऐसे उत्सव में देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा बहुत बुराई देखते हैं।

५. फिर भी कोई-कोई उत्सव तो हैं ही, जो देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा के मत में अनिंद्य हैं।

६. पहले देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा के रंधनागार में प्रतिदिन बहुत से, सैंकड़ों-हजारों, प्राणी सूप के प्रयोजन से मारे जाते थे।

७. परंतु आज, जबकि यह धर्मलिपि लिखी गयी है, सूप के प्रयोजन से तीन ही प्राणी मारे जाते हैं- दो मोर और एक पशु- और वह पशु भी नित्यप्रति नहीं।

८. ये तीन प्राणी भी बाद में नहीं मारे जाएंगे।

गिरनार शिला : द्वितीय अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा के राज्य में सर्वत्र और इसी प्रकार सीमा से सटे हुए पड़ोसी राज्यों में- जैसे चोड, पांड्य, सत्यपुत्र, केरलपुत्र, ताम्रपर्णी भी, यवनराजा अंतियोक और जो भी उस अंतियोक के समीपवर्ती राजा हैं- सब जगह देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा की (ओर से) मनुष्यों के लिए चिकित्सा और पशुओं के लिए चिकित्सा- दो (प्रकार की) चिकित्सा (व्यवस्थाएं) की हुई हैं।

२. और मनुष्यों तथा पशुओं के लिए उपयोगी जो औषधियां जहां जहां नहीं हैं उन सब स्थानों पर मंगवायी गयी हैं और रुपवा दी गयी हैं।

३. और कंदमूल तथा फल जहां-जहां नहीं हैं उन सब स्थानों पर मंगवाये गये हैं और रुपवा दिये गये हैं।

४. और पशुओं तथा मनुष्यों के प्रचुर उपयोग के लिए मार्गों पर कुएं खुदवाये गये हैं और वृक्ष लगवाये गये हैं।

गिरनार शिला : तृतीय अभिलेख

१. देवानंपियो पियदसि राजा एवं आह

२. द्वादसवासाभिसितेन मया इदं आञपितं

३. सर्वत विजिते मम युता च रजूके च प्रादेसिके च पंचसु पंचसु वासेसु अनुसंयानं नियातु एतायेव अथाय इमाय धंमानुसस्टिय यथा अञाय पि कंमाय

४. साधु मातरि च पितरि च सुसूसा मित्रसंस्तुतञातीनं बाम्हण-समणानं साधु दानं प्राणानं साधु अनारंभो अपव्ययता अपभाडता साधु

५. परिसा पि युते आञपयिसति गणनायं हेतुतो च व्यंजनतो च

गिरनार शिला : चतुर्थ अभिलेख

१. अतिकंतं अंतरं बहूनि वससतानि वड्ढितो एव प्राणारंभो विहिंसा च भूतानं ञातीसु असंप्रतिपती बाम्हणसमणानं असंप्रतिपती

२. स अज देवानंप्रियस प्रियदसिनो रञो धंमचरणेन भेरिघोसो अहो धंमघोसो विमानदसणा च हंतिदसणा च अगिखंधानि च अञानि च दिव्यानि रूपानि दसयित्पा जनं

३. यादिसे बहूहि वससतेहि न भूतपुवे तादिसे अज वड्ढिते देवानंप्रियस प्रियदसिनो रञो धंमानुसस्टिया अनारंभो प्राणानं अविहिंसा भूतानं ञातीनं संपटिपती बाम्हणसमणानं संपटिपती मातरि पितरि सुसूसा थेरसुसूसा

४. एस अञे च बहुविधे धंमचरणे वड्ढिते

५. वड्ढयिसति चेव देवानंप्रियो प्रियदसि रजा धंमचरणं इदं

६. पुत्रा च पोत्रा च प्रपोत्रा च देवानंप्रियस प्रियदसिनो रञो प्रवधयिसंति इदं धंमचरणं आव संवटकपा धंमंहि सीलंहि तिस्टंतो धंमं अनुसासिसंति

गिरनार शिला : तृतीय अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं।

२. अभिषेक के बारह वर्ष हो चुकने पर मेरे द्वारा यह आज्ञा जारी की गयी है।

३. मेरे राज्य में सब जगह युक्त, रज्जुक और प्रादेशिक यह जो धर्म का अनुशासन है- इसी प्रयोजन के लिए हर पांच वर्षों में (अपने-अपने क्षेत्राधिकार में) सम्यक प्रकार से दौरा करने के लिए नियमपूर्वक जाया करें जैसे कि दूसरे कामों के लिए भी जाया करते हैं।

४. माता-पिता की सेवा करना उत्तम है; मित्रों, परिचितों, जाति-भाइयों, ब्राह्मणों और श्रमणों को दान देना उत्तम है; प्राणियों की हत्या न करना उत्तम है; कम खर्च करना और कम संचय करना उत्तम है।

५. संक्षेप में और विस्तार के साथ व्यौरा रखने के लिए युक्तों को परिषद भी आदेश देगी।

गिरनार शिला : चतुर्थ अभिलेख

१. कितने ही सैकड़ों वर्षों का अंतराल हो गया है जब से प्राणियों की बलि, जीवों की विहिंसा तथा जाति-भाइयों, ब्राह्मणों और श्रमणों के प्रति अनादर का भाव बढ़ता ही चला गया है।

२. परंतु आज लोगों को देवयान दिखला कर, हाथी दिखला कर, अग्नि की मशालों और अन्य अलौकिक दृश्यों को दिखला कर देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा के धर्माचरण से भेरी का नाद धर्म का नाद हो गया है।

३. जैसा कि कितने ही सैकड़ों वर्षों में पहले कभी नहीं हुआ वैसा आज देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा के धर्मानुशासन से प्राणियों का अ-वध, जीवों की अ-विहिंसा, जाति-भाइयों, ब्राह्मणों और श्रमणों के प्रति आदर का भाव और माता-पिता तथा वृद्धजनों के प्रति सेवा का भाव बढ़ने लगा है।

४. यह और अन्य बहुत प्रकार से धर्म का आचरण बढ़ गया है।

५. और बढ़ता ही रहेगा देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा का यह धर्माचरण।

६. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा के पुत्र, पौत्र और प्रपौत्र सृष्टि के विनाश तक इस धर्माचरण को बढ़ाते चले जाएंगे और धर्म तथा शील में प्रतिष्ठित हुए-हुए वे धर्म का अनुशासन करेंगे।

७. एस हि सेस्टे कंमे य धंमानुसासनं

८. धंमचरणे पि न भवति असीलस

९. त इमम्हि अथम्हि वधी च अहीनी च साधु

१०. एताय अथाय इदं लेखापितं इमस अथस वधि युजंतु हीनि च नो लोचेतव्या

११. द्वादसवासाभिसितेन देवानंप्रियेन प्रियदसिना राजा इदं लेखापितं

कालसी शिला : पंचम अभिलेख

१. देवानंपिये पियदसि लाजा अहा

२. कयाने दुकले

३. ए आदिकले कयानसा से दुकलं कलेति

४. से ममया बहु कयाने कटे

५. ता ममा पुता चा नताले चा पलं चा तेहि ये अपतिये मे आवकपं तथा अनुवटिसंति से सुकटं कछंति

६. ए चु हेता देसं पि हापयिसति से दुकटं कछति

७. पापे हि नामा सुपदालये

८. से अतिकंतं अंतलं नो हुतपुलुव धंममहामता नामा

९. तेदसवसाभिसितेना ममया धंममहामाता कटा

१०. ते सवपासंडेसु वियापटा धंमाधिथानाये चा धंमवढिया हिदसुखाये वा धंमयुतसा योनकंबोजगंधालानं ए वा पि अंने अपलंता

७. क्योंकि यह जो धर्मानुशासन है, यह श्रेष्ठ कर्म है।

८. शील-रहित (व्यक्ति) द्वारा धर्म का आचरण संभव नहीं होता है।

९. तो इस प्रयोजन के उत्कर्ष का होना और अपकर्ष का न होना अच्छा है।

१०. इस उद्देश्य से यह लिखवाया गया है कि वे (अर्थात, मेरे उत्तराधिकारी) इस प्रयोजन के उत्कर्ष में लगे रहें और इसके अपकर्ष में रुचि न लें।

११. अभिषेक के बारह वर्ष हो चुकने पर देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा यह लिखवाया गया है।

[स्पष्टीकरण पंक्ति (२): डा. भंडारकर ने 'विमानवत्थु' का उद्धरण दिया है जिसके अनुसार धार्मिक मनुष्य को परलोक में स्वर्ग का सुख मिलता है जहां (१) चलता-फिरता महल, (२) हस्ती=ऐरावत की सवारी, और (३) सितारों की तरह भास्वर रूप की प्राप्ति होती है। अशोक ने इनके प्रदर्शन से लोगों का ध्यान धार्मिक जीवन बिताने की ओर आकृष्ट किया प्रतीत होता है।]

कालसी शिला : पंचम अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा कहते हैं।

२. भलाई का काम करना कठिन होता है।

३. जो भलाई के काम में पहल करता है वह कठिन काम करता है।

४. तो मेरे द्वारा बहुत से भलाई के काम किये गये हैं।

५. यदि मेरे पुत्र, नाती और उनसे आगे जो संतान होगी कल्पांत तक वैसा ही अनुवर्तन करेंगे तो सुकृत (अर्थात, पुण्य का कार्य) करेंगे।

६. और जो इसका तनिक भी अपकर्ष करेगा वह दुष्कृत (अर्थात, पाप का कार्य) करेगा।

७. वस्तुतः पाप का तो खूब दलन किया जाना चाहिए।

८. तो एक अंतराल हो गया है जबकि पहले 'धर्ममहामात्र' नाम के (अधिकारी) नहीं हुआ करते थे।

९. अभिषेक के तेरह वर्ष हो चुकने पर मेरे द्वारा धर्ममहामात्र (नियुक्त) किये गये हैं।

१०. वे सब संप्रदायों में धर्म की स्थापना और धर्म की वृद्धि के लिए और यवनों, कंबोजों, गंधारों और जो भी अन्य अपरांत (पश्चिमी सीमा पर रहने वाले लोग) हैं उनमें जो धर्मपरायण हैं उनके हित-सुख के लिए लगाये गये हैं।

११. भटमयेसु बंभनिभेसु अनथेसु वुधेसु हिदसुखाये धंमयुताये अपलिबोधाये वियपटा ते

१२. बंधनवधसा पटिविधानाये अपलिबोधाये मोखाये चा एयं अनुबधा पजाव ति वा कटाभिकाले ति वा महालके ति वा वियापटा ते

१३. हिदा बाहिलेसु चा नगलेसु सवेसु ओलोधनेसु भातिनं च ने भगिनिना ए वा पि अंने नातिक्ये सवता वियापटा

१४. ए इयं धंमनिसिते ति वा दानसुयुते ति वा सवता विजितसि मम धंमयुतसि वियापटा ते धंममहामता

१५. एताये अठाये इयं धंमलिपि लेखिता चिलथितिक्या होतु तथा च मे पजा अनुवततु

गिरनार शिला : षष्ठ अभिलेख

१. देवा..... सि राजा एवं आह.....

२. अतिक्रातं अंतरं न भूतपुव सव... ल अथकंमे व पटिवेदना वा

३. त मया एवं कतं

४. सवे काले भुंजमानस मे ओरोधनम्हि गभागारम्हि वचम्हि व विनीतम्हि च उयानेसु च सवत्र पटिवेदका स्टिता अथे मे जनस पटिवेदेथ इति

५. सर्वत्र च जनस अथे करोमि

६. य च किंचि मुखतो आञपयामि स्वयं दापकं वा स्रावापकं वा य वा पुन महामात्रेसु आचायिके अरोपितं भवति ताय अथाय विवादो निझती व संतो परिसायं आनंतरं पटिवेदेतव्यं मे सर्वत्र सर्वे काले

७. एवं मया आञपितं

११. वे भृत्यों और भर्तारों, ब्राह्मणों और धनाढ्यों, अनाथों तथा बड़े-बूढ़ों के हित-सुख के लिए, उन्हें धर्म-परायण बनाने के लिए और उनकी कठिनाइयों का निवारण करने के लिए लगाये गये हैं।

१२. वे बंधन में बँधे हुओं (अर्थात, कैदियों) के (धन से) भरण-पोषण करने के लिए, उनकी कठिनाइयों को दूर करने के लिए और ऐसे लोगों की रिहाई के लिए जिनकी बहुत संतान है अथवा बहुत विपत्ति-ग्रस्त हैं अथवा बहुत बूढ़े हैं - नियुक्त हैं।

१३. (वे) यहां (अर्थात, पाटलिपुत्र में) और बाहर के सब नगरों में (हमारे) भाइयों, बहनों और जो अन्य संबंधी हैं उनके अंतःपुरों में सब जगह नियुक्त हैं।

१४. वे धर्ममहामात्र मेरे राज्य में सर्वत्र धर्मपरायण लोगों के बीच - चाहे वे धर्म के प्रति श्रद्धावान हैं अथवा खूब दान देने वाले हैं - नियुक्त हैं।

१५. यह धर्मलिपि इस प्रयोजन से लिखवायी गयी है कि यह चिरस्थायी हो और मेरी प्रजा इसका अनुवर्तन करे।

गिरनार शिला : षष्ठ अभिलेख

१. देवा (नांप्रिय प्रियद)र्शी राजा ऐसा कहते हैं।

२. एक अंतराल हो गया है जबकि पहले हर समय न तो राज्य का आवश्यक कार्य होता था और न ही गतिविधियों की सूचना होती थी।

३. इसलिए मेरे द्वारा ऐसा (प्रबंध) किया गया है कि -

४. हर समय - चाहे मैं भोजन करता होऊं अथवा अंतःपुर में, शयनकक्ष में, पशुशाला में, घोड़े (की पीठ) पर अथवा उद्यान में होऊं - सब जगह प्रतिवेदक रुक कर मुझे जनता का वृत्तांत कहें।

५. (मैं) सब जगह जनता का काम करता हूं।

६. और (मैं) स्वयं जो कोई मौखिक आज्ञा देता हूं कि (अमुक) दान दिया जाय अथवा (अमुक) घोषणा की जाय या फिर महामात्रों को कोई अत्यावश्यक कार्य सौंपा गया हो - उसके बारे में परिषद में कोई विवाद खड़ा हो जाय अथवा गंभीर चिंतन चलने लगे, तो मुझे अविलंब हर जगह हर घड़ी (उसकी) सूचना मिलनी चाहिए।

७. ऐसा मेरा आदेश है।

८. नास्ति हि मे तोसो उस्टानम्हि अथसंतीरणाय व

९. कतव्यमते हि मे सर्वलोकहितं

१०. तस च पुन एस मूले उस्टानं च अथसंतीरणा च

११. नास्ति हि कंमतरं सर्वलोकहितत्या

१२. य च किंचि पराक्रमामि अहं किंति भूतानं आनंणं गछेयं इध च नानि सुखापयामि परत्रा च स्वगं आराधयंतु त

१३. एताय अथाय अयं धंमलिपी लेखापिता किंति चिरं तिस्टेय इति तथा च मे पुत्रा पोता च प्रपोत्रा च अनुवतरं सवलोकहिताय

१४. दुकरं तु इदं अञत्र अगेन पराक्रमेन

गिरनार शिला : सप्तम अभिलेख

१. देवानंपियो पियदसि राजा सर्वत इछति सवे पासंडा वसेयु

२. सवे ते सयमं च भावसुधिं च इछति

३. जनो तु उचावचछंदो उचावचरागो

४. ते सर्व व कासंति एकदेसं व कसंति

५. विपुले तु पि दाने यस नास्ति सयमे भावसुधिता व कतंञता व दढभतिता च निचा वाढं

गिरनार शिला : अष्टम अभिलेख

मूल अभिलेख

१. अतिकातं अंतरं राजानो विहारयातां ञयासु

२. एत मगच्या अञानि च एतारिसानि अभीरमकानि अहंसु

३. सो देवानंप्रियो पियदसि राजा दसवसाभिसितो संतो अयाय संबोधिं

८. भले ही मैं कितना परिश्रम करूँ अथवा काम निपटाता चला जाऊँ मुझे संतोष ही नहीं होता है।

९. सब लोगों का हित साधना ही मेरा मुख्य कर्तव्य है।

१०. और फिर उसका भी मूल (आधार) है – परिश्रम करना और कार्यों को निपटाते चले जाना।

११. वस्तुतः सब लोगों की भलाई करने से बढ़कर दूसरा कोई काम नहीं है।

१२. मैं जो कुछ पराक्रम करता हूं (वह इसलिए है कि मैं) कैसे प्राणियों के ऋण से उऋण हो सकूं, उनको यहां सुखी बना सकूं और परलोक में वे स्वर्ग लाभ कर सकें।

१३. इस प्रयोजन से यह धर्मलिपि लिखवायी गयी है जिससे कि यह चिरस्थायिनी हो और मेरे पुत्र, पौत्र तथा प्रपौत्र सब लोगों की भलाई के लिए इसका अनुवर्तन करें।

१४. परंतु चोटी का पुरुषार्थ किये बिना यह हो नहीं सकता।

गिरनार शिला : सप्तम अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा चाहते हैं कि सब संप्रदाय वाले सब जगह रहें।

२. वे सब संयम और चित्त-शुद्धि चाहते हैं।

३. परंतु लोगों की नाना प्रकार की इच्छाएं और नाना प्रकार की आसक्तियां रहती हैं।

४. वे (अपने-अपने कर्तव्य) या तो पूरी तरह करेंगे अन्यथा आंशिक रूप से करेंगे।

५. बहुत दान देने वाले भी जिस (किसी) के पास संयम, चित्त-शुद्धि, कृतज्ञता अथवा निश्चल भक्ति का अभाव है वह सचमुच गिरा हुआ ही है।

गिरनार शिला : अष्टम अभिलेख

१. एक अरसा हो गया है जबकि राजा लोग विहार-यात्रा पर जाया करते थे।

२. इसमें आखेट और इसी प्रकार के अन्य आमोद-प्रमोद हुआ करते थे।

३. अस्तु, देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा अभिषेक के दस वर्ष हो चुकने पर बोध-गया गये।

४. तेनेसा धंमयाता

५. एतयं होति बाम्हणसमणानं दसणे च दाने च थैरानं दसणे च हिरंणपटिविधानो च जानपदस च जनस दस्पनं धंमानुसस्टी च धमपरिपुछा च तदोपया

६. एसा भुय रति भवति देवानंपियस प्रियदसिनो राजो भागे अंञे

गिरनार शिला : नवम अभिलेख

१. देवानंपियो प्रियदसि राजा एव आह

२. अस्ति जनो उचावचं मंगलं करोते आवाधेसु वा आवाहवीवाहेसु वा पुत्रलाभेसु वा प्रवासंम्हि वा एतम्ही च अञम्हि च जनो उचावचं मंगलं करोते

३. एत तु महिडायो वहुकं च वहुविधं च छुदं च निरथं च मंगलं करोते

४. त कतव्यमेव तु मगलं

५. अपफलं तु खो एतरिसं मंगलं

६. अयं तु महाफले मंगले य धंममंगले

७. ततेत दासभतकम्हि सम्यप्रतिपती गुरूनं अपचिति साधु पाणेसु सयमो साधु वम्हणसमणानं साधु दानं एत च अञ च एतारिसं धंममंगलं नाम

८. त वतव्यं पिता व पुतेन वा भात्रा वा स्वामिकेन वा इदं साधु इदं कतव्यं मंगलं आव तस अथस निस्टानाय

९. अस्ति च पि वुतं साधु दन इति

१०. न तु एतारिसं अस्ता दानं व अनगहो व यारिसं धंमदानं व धमनुगहो व

११. न तु खो मित्रेन व सुहदयेन वा ञतिकेन व सहायन व ओवादितव्यं नम्हि तम्हि पकरणे इदं कचं इदं साध इति इमिना सक स्वगं आराधेतु इति

१२. कि च इमिना कतव्यतरं यथा स्वगारधी

४. उससे यह धर्म-यात्रा (का चलन आरंभ हुआ)।

५. इसमें होता है – ब्राह्मणों तथा श्रमणों का दर्शन और (उनके निमित्त) दान, वयोवृद्धों का दर्शन और (उनका) सुवर्ण से पोषण, जनपद के लोगों का दर्शन, धर्मदेशना और इस (अवसर) के अनुकूल धर्म के वारे में परिप्रश्न (विस्तृत पूछताछ)।

६. यह आनंदातिरेक देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा के (शासन-काल के) अपर भाग में प्राप्त होता है।

गिरनार शिला : नवम अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं।

२. ऐसे लोग हैं जो विपत्ति के समय, पुत्र-पुत्री के परिणय के समय, पुत्र-लाभ के समय अथवा प्रवास-काल में नाना प्रकार के मंगलाचार करते हैं। इन और इसी प्रकार के अन्य (अवसरों) पर लोग भिन्न-भिन्न प्रकार के मंगलाचरण करते हैं।

३. परंतु इनमें महिलाएं वहुतेरे और अनेक प्रकार के ओछे और निरर्थक मंगलाचार करती हैं।

४. तो भी, मंगलाचार तो करने ही चाहिएं।

५. परंतु इस प्रकार के मंगलाचार निश्चय ही अल्प फल देने वाले होते हैं।

६. यह जो "धर्ममंगल" है वह मंगलाचार वहुत फल देने वाला होता है।

७. उसमें होता है – दासों तथा भृत्यों के प्रति शिष्ट व्यवहार, वड़ों के प्रति आदर का भाव, प्राणियों के प्रति संयम (और) ब्राह्मणों तथा श्रमणों के निमित्त दान-दक्षिणा। ये और इसी प्रकार के अन्य (आचरण) 'धर्ममंगल' कहलाते हैं।

८. तो पिता, पुत्र, भाई अथवा भर्तार को कहना चाहिए कि यह उत्तम है, उस (अर्थात, अभीष्ट) प्रयोजन की सिद्धि-पर्यंत यह मंगल करना चाहिए।

९. और कहा भी गया है: "दान देना उत्तम है।"

१०. ऐसा कोई दान अथवा उपकार नहीं होता है जैसा कि धर्म का दान अथवा धर्म का उपकार।

११. इसलिए मित्र, सुहृद, जाति-भाई अथवा सहायी द्वारा दृढ़तापूर्वक कहा जाना चाहिए कि ऐसे-ऐसे प्रसंग में यह करना चाहिए, यह उत्तम है, इससे स्वर्ग की प्राप्ति संभव है।

१२. और इससे वढ़ कर करने के लिए रखा ही क्या है कि स्वर्ग मिल जाय।

गिरनार शिला : दशम अभिलेख

१. देवानंपियो प्रियदसि राजा यसो व कीति व न महाथावहा मञते अञ
तदात्यनो दिघाय च मे जनो धंमसुसुंसा सुसुसता धंमवुतं च अनुविधियतां

२. एतकाय देवानंपियो पियदसि राजा यसो व किति व इछति

३. यं तु किचि परिकमते देवानं प्रियदसि राजा त सवं पारत्रिकाय किंति
सकले अपपरिस्रवे अस

४. एस तु परिसवे य अपुंञं

५. दुकरं तु खो एतं छुदकेन व जनेन उसटेन व अञत्र अगेन पराक्रमेन सं
परिचजित्पा

६. ए तु खो उसटेन दुकरं

गिरनार शिला : एकादश अभिलेख

१. देविनंप्रियो पियदसि राजा एवं आह

२. नास्ति एतारिसं दानं यारिसं धंमदानं धंमसंस्तवो वा धंमसंविभागो वा
धंमसंबधो व

३. तत इदं भवति दासभतकम्हि सम्यप्रतिपती मातरि पितरा साधु सुसुसा
मितसस्तुतञातिकानं वाम्हणसमणानं साधु दानं प्राणानं अनारंभो साधु

४. एत वतव्यं पिता व पुत्रेन व भाता व मितसस्तुतञातिकेन व आव
पटीवेसियेहि इद साधु इद कतव्यं

५. सो तथा करु इलोकचस आरधो होति परत च अंनंतं पुइञं भवति तेन
धंमदानेन

गिरनार शिला : दशम अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा यश अथवा कीर्ति को (कोई) बड़े महत्त्व की वस्तु नहीं मानते सिवाय इसके कि अभी, और दीर्घ काल तक, उनकी प्रजा धर्म की बात सुनने को लालायित रहे और धर्म का आचरण करे (क्योंकि यह उनका मंतव्य है)।

२. इतने (मात्र) के लिए देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा यश वा कीर्ति की कामना करते हैं।

३. जो कुछ पराक्रम (उद्यम) देवानां (प्रिय) प्रियदर्शी राजा करते हैं वह सब (भवसागर से) पार जाने के लिए है कि कैसे सब (लोग) (अपने-अपने) परिस्रवों (पापकर्मों) से मुक्तप्राय हो जायं।

४. जो अ-पुण्य (अर्थात, पाप) है वही 'परिस्रव' (कहलाता) है।

५. परंतु निश्चय ही किसी छोटे या बड़े व्यक्ति द्वारा बिना सब (आसक्तियां) छोड़े हुए और बिना उत्तम पराक्रम किये हुए यह कर पाना कठिन है।

६. और बड़े व्यक्ति द्वारा तो यह निःसंदेह (अपेक्षाकृत अधिक) दुःसाध्य है।

गिरनार शिला : एकादश अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं।

२. ऐसा कोई दान नहीं है जैसा कि धर्म का दान। (ऐसा कोई परिचय नहीं है जैसा कि) धर्म का परिचय। (ऐसा कोई बंटवाड़ा नहीं है जैसा कि) धर्म का बंटवाड़ा। (ऐसा कोई संबंध नहीं है जैसा कि) धर्म का संबंध।

३. उसमें यह होता है कि दासों और भृत्यों के प्रति सम्यक व्यवहार उत्तम होता है; माता-पिता की सेवा उत्तम होती है; मित्रों, परिचितों, जातिभाइयों, ब्राह्मणों तथा श्रमणों को दान देना उत्तम होता है (और) प्राणियों की हिंसा न करना उत्तम होता है।

४. पिता, पुत्र, भाई, मित्र, परिचित, जातिभाई – यहां तक कि पड़ोसियों द्वारा भी – यह कहा जाना चाहिए: "यह उत्तम है, इसे करना चाहिए।"

५. ऐसा करने वाले को उस धर्मदान से इस लोक की प्राप्ति (अर्थात, सिद्धि) होती है और परलोक में असीम पुण्य मिलता है।

गिरनार शिला द्वादश : अभिलेख

१. देवानंपिये पियदसि राजा सवपासंडानि च पवजितानि च घरस्तानि च पूजयति दानेन च विवाधाय च पूजाय पूजयति ने

२. न तु तथा दानं व पूजा व देवानंपियो मंञते यथा किति सारवढी अस सवपासंडानं

३. सारवढी तु बहुविधा

४. तस तु इदं मूलं य वचिगुती किति आत्यपासंडपूजा व परपासंडगरहा व नो भवे अप्रकरणम्हि लहुका व अस तम्हि तम्हि प्रकरणे

५. पूजेतया तु एव परपासंडा तेन तेन प्रकरणेन

६. एवं करं आत्यपासंडं च वढयति परपासंडस च उपकरोति

७. तदंञथा करोतो आत्यपासंडं च खणति परपासंडस च पि अपकरोति

८. यो हि कोचि आत्यपासंडं पूजयति परपासंडं व गरहति सवं आत्यपासंडभतिया किति आत्यपासंडं दीपयेम इति सो च पुन तथ करातो आत्यपासंडं बाढतरं उपहनाति

९. न समवायो एव साधु किति अञमंञस धंमं सुणारु च सुसुंसेर च

१०. एवं हि देवानंपियस इछा किति सवपासंडा बहुसुता च असु कलाणागमा च असु

११. ये च तत्र तत प्रसंना तेहि वतव्यं

१२. देवानंपियो नो तथा दानं व पूजा व मंञते यथा किति सारवढी अस सवपासंडानं

१३. बहका च एताय अथा व्यापता धंममहामाता च इथीझखमहामाता च वचभूमीका च अञे च निकाया

१४. अयं च एतस फल य आत्यपासंडवढी च होति धंमस च दीपना

गिरनार शिला : द्वादश अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा सब संप्रदाय वालों, गृहत्यागियों तथा गृहस्थों का सम्मान करते हैं- (वे) दान और विविध प्रकार की अर्चना से उनका सत्कार करते हैं।

२. किंतु देवानांप्रिय दान अथवा अर्चना को उतना (महत्त्वपूर्ण) नहीं मानते जितना इसे कि सब संप्रदायों में सार की वृद्धि हो।

३. सार की वृद्धि अनेक प्रकार से होती है।

४. किंतु इसका मूल आधार यह है कि वाणी पर नियंत्रण बना रहे। सो क्या? कि बिना प्रसंग के अपने संप्रदाय की बड़ाई और अन्य संप्रदाय की निंदा न हो अथवा प्रसंग-विशेष में साधारण-सी (चर्चा) हो।

५. जिस-किसी प्रसंग में अन्य संप्रदायों की प्रशंसा ही की जानी चाहिए।

६. ऐसा करता हुआ (व्यक्ति) अपने संप्रदाय की उन्नति करता है और अन्य संप्रदायों पर उपकार करता है।

७. इसके विपरीत करता हुआ (व्यक्ति) अपने संप्रदाय की हानि करता है और अन्य संप्रदायों का भी अपकार करता है।

८. क्योंकि जो कोई अपने संप्रदाय के प्रति आसक्ति होने के कारण कि कैसे मैं अपने संप्रदाय को प्रकाशित करूं, अपने संप्रदाय की प्रशंसा और अन्य संप्रदायों की निंदा करने लगता है- वह ऐसा करता हुआ वास्तव में अपने संप्रदाय की खूब बढ़-चढ़ कर हानि करता है।

९. इसलिए मेल-जोल ही उत्तम है। सो क्या? कि लोग एक दूसरे के धर्म (अर्थात, धारण करने योग्य तत्त्व) को सुनें और सुनायें।

१०. देवानांप्रिय की ऐसी कामना है कि सब संप्रदाय वाले बहुत विद्वान हों और कल्याण के भागी हों।

११. इसलिए जो अपने-अपने (संप्रदाय में) अनुरक्त हों उनसे कहना चाहिए-

१२. "देवानांप्रिय दान अथवा पूजा-अर्चना को वैसा (महत्त्वपूर्ण) नहीं मानते जैसा- क्या?- कि सब संप्रदायों में सार की वृद्धि हो।"

१३. और इस प्रयोजन के लिए बहुत से धर्ममहामात्र, स्त्र्यध्यक्ष महामात्र, व्रजभूमिक तथा अन्य (अधिकारि-) वर्ग नियुक्त किये गये हैं।

१४. और यह इसका परिणाम है कि अपने संप्रदाय की उन्नति होती है और धर्म का प्रकाशन होता है।

शाहबाजगढ़ी शिला : त्रयोदश अभिलेख

१, अष्टवर्षअभिषिक्तेन देवानंप्रिय प्रियदर्शिन राज्ञा कलिंग विजित

२, दियड्मत्रे प्रणयानमत्रे ये तत्र अपुढे अनयद्यमत्रे तत्र को बहुतवतके व मुटे

३, तदो पछ अधुन कलिंगे विजिते देवानंप्रिय अनुतपये अनुबुधिके च देवानंप्रिय

४, सो अस्ति अनुसोचन देवानंप्रिय विजिनीत कलिंगानि

५, अविहितके हि विजितसमे सो तत्र वध व मरण व अपवहो व जनस ते बहु तेदनियमत्रके गुरुमते च देवानंप्रिय

६, दुढ हि सू तसो मुरुमरुतो देवानंप्रिय

७, सू तत्र खमति कुमय व अलय व हेढे व प्रपेढ पुढम व तेषु विहित एष अनुसिसुसूषु हिरण्यसु सूषु मुरुम सूषु विजितसमतविधिसु दसमतसके समसुसिसु देवानंप्रिय तेष तत्र भोति अपघो व वधो व अविप्रयस्त व निक्रमस

८, तेन त हेव सुनिकमते तेषम अनुनयति व तेष विजितसमतविधिक खमत अनुसिसि तत्र ते हि तेष तं अपघो होति

९, एतिकये च पढे मनुसकुढे पुढमते च देवानंप्रिय

१०, सवत्र च मकटो हेव प्रयतिय व सम प्रियसे

११, हेद समसे कसे सव कलिंग हतो व मुटे व अपवुढ व तत्रो जनपदसे व सहसगुणम व अज मुढमत्र व देवानंप्रिय

१२, हेद हि च अनुतपये देवानंप्रिय प्रियदर्शिनो च देवानंप्रिय ये अनो अपघो

शाहबाजगढ़ी शिला : त्रयोदश अभिलेख

१, देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा के अभिषेक के आठ वर्ष हो चुकने पर (उनके द्वारा) कलिंग पर विजय पायी गयी।

२, वहां से डेढ़ लाख प्राणी बंदी बनाकर बाहर भिजवाये गये, एक लाख वहीं पर मारे गये और इससे कई गुना (अधिक) मर गये।

३, उसके पश्चात अब कलिंग के हस्तगत हो जाने पर देवानांप्रिय का धर्म-अनुशीलन, धर्म के प्रति रुझान और धर्मानुशासन तीव्र हो उठे हैं।

४, कलिंग पर विजय पाकर देवानांप्रिय को पश्चात्ताप हुआ है।

५, क्योंकि अविजित (देश) को विजय करने समय वहां पर लोगों का जो मारना, मरण अथवा निर्वासन होता है वह देवानांप्रिय के मन में बहुत दुःखजनक और गंभीर (बात) है।

६, परंतु देवानांप्रिय के मन में यह और भी गंभीर (बात) है कि -

७, वहां पर जो ब्राह्मण, श्रमण, अन्य संप्रदाय वाले अथवा गृहस्थ निवास करते हैं - जिनमें गुरु जनों की सेवा, माता पिता की सेवा, गुरुजनों की सेवा, मित्रों, परिचितों, सहायकों, जातिभाइयों, दासों एवं भृत्यों के प्रति सम्यक व्यवहार और दृढ़ भक्ति का चलन है - वहां पर उनका आघात, वध अथवा प्रियजनों का देश निकाला होता है।

८, अथवा जो लोग स्वयं तो सुरक्षित होते हैं परंतु उनके मित्र, परिचित, सहायक (अथवा) जातिभाई विपत्तिग्रस्त हो जाते हैं (उनके प्रति उनका) स्नेह अक्षुण्ण होने के कारण उनको भी आघात पहुँचता है।

९, इसके भागीदार सब मनुष्य होते हैं परंतु देवानांप्रिय के लिए यह (और भी) गंभीर (बात) है।

१०, और ऐसा (कोई) नहीं है जिसका किसी न किसी संप्रदाय में अनुराग न होता हो।

११, इसलिए जितने भी लोग उस समय कलिंग में मारे गये, मर गये अथवा निर्वासित हुए, उनका सौवां भाग अथवा हजारवां भाग भी आज देवानांप्रिय के मन में गंभीर (बात) होगी।

१२, और जो कोई भी अहित करे, देवानांप्रिय के मत में, उसे जहां तक बन पड़े क्षमा कर देना चाहिए।

१३. य पि च अटवि देवनंप्रियस विजिते भोति त पि अनुनेति अनुनिजंति

१४. अनुतपे पि च प्रभवे देवनंप्रियस वुचति तेप किति अवत्रपेयु च हंञेयसु

१५. इछति हि देवनंप्रियो सवप्रभुतन अछति संयमं समचरियं रभसियं

१६. अयि च मुखमुत विजये देवनंप्रियस यो धंमविजयो

१७. सो च पुन लधो देवनंप्रियस इह च सवेषु च अंतेषु अ[illegible] योजनशतेषु यत्र अंतियोको नम योनरज पर च तेन अंतियोकेन चतुरे ४ रजा तुरमये नम अंतेकिनि नम मक नम अलिकसुदरो नम निच चोडपंड आ तंबपंणिय

१८. एवमेव हिद रजविषयस्मि योनकंबोयेषु नभकनभिति भोजपितिनिकेषु अंधपालिटेषु सवत्र देवनंप्रियस धंमनुशस्ति अनुवटंति

१९. यत्र पि देवनंप्रियस दुत न व्रजंति ते पि श्रुतु देवनंप्रियस धंमवुत विधनं धंमनुशस्ति धंमं अनुविधियंति अनुविधियशंति च

२०. यो स लधे एतकेन भोति सवत्र विजयो सवत्र पुन विजयो प्रितिरसो सो

२१. लध भोति प्रिति धंमविजयस्मि

२२. लहुक तु खो स प्रिति

२३. परत्रिकमेव महफल मंञति देवनंप्रियो

२४. एतये च अटये अयि धंमलिपि निपिस्त किति पुत्र प्रपोत्र मे असु न विजयं म विजेतविअ मंञिषु स्यकस्मि यो विजये क्षंति च [illegible] च सकेतु च यो विज मञतु यो धंमविजयो

२५. सो हिदलोकिको परलोकिको

१३. और देवानांप्रिय के राज्य में जो वनवासी लोग हैं उनको भी वह अनुनय करते हैं (और अपनी विचारधारा) में डालते हैं।

१४. और उनको जतलाया जाता है कि दुःखी होने पर भी देवानांप्रिय में (दंड देने की) क्षमता है जिससे कि वे (अपने दुराचरण के लिए) लज्जित हों और मृत्यु (-दंड) से बचे रहें।

१५. देवानांप्रिय चाहते हैं कि विश्व के समस्त सब प्राणियों की यथास्थिति, आत्मसंतुलन तथा शांतिपूर्ण चर्या बनी रहे।

१६. और यह जो धर्मविजय है, देवानांप्रिय के मत में यही मुख्य विजय है।

१७. और फिर इसे देवानांप्रिय ने यहां और सब सीमावर्ती राज्यों में छः सौ योजन की दूरी तक - जहां अंतियोक नाम का यवन राजा और उस अंतियोक से परे तुरमय, अंतिकिन, मक (तथा) अलिकसुंदर नाम के चार (४) राजा (राज्य करते) हैं - और नीचे (दक्षिण में) चोल या पांड्य, ताम्रपर्णी तक प्राप्त किया है।

१८. इसी प्रकार यहां राजा के राज्य में, यवनों एवं कंबोजों में, नाभकों तथा नाभितों में, भोजों और पितिनिकों में, आंध्रों एवं पुलिंदों में - सभी जगह देवानांप्रिय के धर्मानुशासन का अनुवर्तन किया जाता है।

१९. जहां-जहां देवानांप्रिय के दूत नहीं जाते हैं, वहां-वहां भी लोग देवानांप्रिय के धर्मवृत्त, विधान तथा धर्मानुशासन को सुनकर धर्म का पालन कर रहे हैं और करते रहेंगे।

२०. इससे जो यह सर्वत्र और बार बार विजय प्राप्त हुई है वह तृप्ति दिलाने वाली है।

२१. धर्म द्वारा विजय प्राप्त करने से (मुझे) तृप्ति प्राप्त हुई है।

२२. परंतु यह तृप्ति वस्तुतः अल्प (महत्व की) है।

२३. देवानांप्रिय (भवसागर से) पार ले जाने वाले (लाभ) को ही बड़ा फल मानते हैं।

२४. और इस प्रयोजन के लिए यह धर्मलिपि लिखवायी गयी है कि मेरे पुत्र, प्रपौत्र जो हों वे नयी विजय को विजय-योग्य न मानें, और यदि इन्हें विजय में रस मिलता ही हो तो वे क्षमा कर देने और हल्का दंड देने में ही रुचि लें और धर्म-विजय को ही (सच्ची) विजय समझें।

२५. वह (विजय) इहलोक और परलोक दोनों में फल देने वाली होती है।

२६. सवचतिरति भोतु य धंमरति

२७. स हि हिदलोकिक परलोकिक

गिरनार शिला : चतुर्दश अभिलेख

१. अयं धंमलिपी देवानंप्रियेन प्रियदसिना राजा लेखापिता अस्ति एव संखितेन अस्ति मझमेन अस्ति विस्ततन

२. न च सर्व सर्वत घटितं

३. महालके हि विजितं बहु च लिखितं लिखापयिसं चेव

४. अस्ति च एत कं पुन पुन वुतं तस तस अधस माधूरताय किंति जनो तथा पटिपजेथ

५. तत्र एकदा असमातं लिखितं अस देसं व सछाय कारणं व अलोचेत्य लिपिकारापरधेन व

धौली शिला : प्रथम पृथक अभिलेख

१. देवानंपियस वचनेन तोसलियं महामात नगलवियोहालका वतविय

२. अं किछि दखामि हकं तं इछामि किंति कंमन पटिपादयेहं दुवालते च आलभेहं

३. एस च मे मोख्यमत दुवाल एतसि अठसि अं तुफेसु अनुसथि

४. तुफे हि बहूसु पानसहसेसुं आयत पनयं गछेम तु मुनिसानं

५. सवे मुनिसे पजा ममा

६. अथा पजाये इछामि हकं किंति सवेन हितसुखेन हिदलोकिक-पाललोकिकेन यूजेवू ति तथा..... मुनिसेसु पि इछामि हकं

७. नो च पापुनाथ आवग-मुके इयं अठे

२६. जो धर्मरति है वही पूर्णतः अतिरति है।

२७. वही इहलौकिकी और पारलौकिकी है।

गिरनार शिला : चतुर्दश अभिलेख

१. यह धर्मलिपि देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा लिखवायी गयी है - (यह) संक्षेप में है, मध्यम (आकार) में है (अथवा) विस्तार में है।

२. सब कुछ सब जगह के लिए उपयुक्त नहीं था।

३. क्योंकि (मेरा) साम्राज्य विशाल है और बहुत कुछ लिखा गया है और लिखवाना भी है।

४. इसमें कुछ ऐसा भी है जो किसी-किसी विषय की रोचकता के कारण बार-बार कहा गया है। सो क्यों? (वह इसलिए कि) लोग वैसा प्रतिपादन करें (अर्थात, उसे जीवन में उतारें)।

५. यह देख कर कि (शिला पर) स्थान (की कमी है) अथवा (शिला) क्षति-ग्रस्त है अथवा लिपिकार की भूल से भी इनमें कहीं-कहीं अधूरा लिखा हुआ हो सकता है।

धौली शिला : प्रथम पृथक अभिलेख

१. देवानांप्रिय के हवाले से तोसली के महामात्रों को, जो नगर के न्याय-शासक हैं, (इस प्रकार) कहना चाहिए -

२. मैं जो कुछ (उचित) समझता हूं उसके बारे में चाहता हूं कि कैसे इसे क्रियान्वित करूं और ढंग से इसकी शुरूआत करूं।

३. और मेरे विचार में इसका मुख्य उपाय यह है कि इस प्रयोजन के लिए मैं आपको अनुदेश दूं।

४. आप कितने ही हजारों प्राणियों के बीच स्थापित हैं, (इसलिए कि आप) मनुष्यों का प्रेम प्राप्त कर सकें।

५. सारे मनुष्य मेरी संतान हैं।

६. जिस प्रकार मैं (अपनी) संतान के लिए कामना करता हूं कि वह इहलोक तथा परलोक में हितसुख-लाभी हो वैसे ही (सभी) मनुष्यों के लिए मेरी मनोकामना है।

७. आप नहीं समझते कि मेरा मंतव्य कितना गहरा है।

८. केछ व एकपुलिसे..... नाति एतं से पि देसं नो सवं

९. देखत हि तुफे एतं सुविहिता पि

१०. नितियं एकपुलिसे पि अधि ये बंधनं वा पलिकिलेसं वा पापुनाति

११. तत होति अकस्मा तेन वधनंतिक अंने च.... हु जने दविये दुखीयति

१२. तत इछितविये तुफेहि किंति मझं पटिपादयेमा ति

१३. इमेहि चु जातेहि नो संपटिपजति इसाय आसुलोपेन निठूलियेन तूलनाय अनावूतिय आलसियेन किलमथेन

१४. से इछितविये किति एते जाता नो हुवेवु ममा ति

१५. एतस च सवस मूले अनासुलोपे अतूलना च

१६. नितियं ए किलंते सिया न ते उगछ संचलितविये तु वटितविये एतविये वा

१७. हेवंमेव ए दखेय तुफाक तेन वतविये आनंने देखत हेवं च हेवं च देवानंपियस अनुसथि

१८. से महाफले ए तस संपटिपाद महाअपाये असंपटिपति।

१९. विपटिपादयमीने हि एतं नथि स्वगस आलधि नो लाजालधि

२०. दुआहले हि इमस कंमस मे कुते मनोअतिलेके

२१. संपटिपजमीने चु एतं स्वगं आलाधयिसथ मम च आननियं एहथ

२२. इयं च लिपि तिसनखतेन सोतविया

८. कदाचित कोई एकाध व्यक्ति इसे समझता भी है तो वह भी थोड़ा-सा ही, पूरा नहीं।

९. (अब) आप इस ओर ध्यान दें, जैसी कि आपको सुविधा भी है।

१०. नीति के अनुसरण में कोई ऐसा व्यक्ति हो सकता है जिसे कारावास अथवा यातना का दंड मिला हो।

११. वहां अकस्मात उस बंधन में उसका प्राणांत हो जाता है और दूसरे (बहुत से) लोग लंबे समय तक दुःखी होते रहते हैं।

१२. इसलिए आपको (विचारना) चाहिए कि कैसे मध्यम मार्ग का अनुसरण करें।

१३. परंतु इन प्रवृत्तियों से सम्यक आचरण नहीं हो सकता- ईर्ष्या, अनवधानता, निष्ठुरता, त्वरा (जल्दबाजी), अनावृत्ति (अभ्यास न रहना), आलस्य और क्लांति (थकान)।

१४. इसलिए आपको चेष्टा करनी चाहिए कि ये प्रवृत्तियां मेरी न हों।

१५. और इन सबकी तह में हैं- अवधानता (सजगता) और अ-त्वरा (जल्दबाजी का अभाव, समता)।

१६. जो हर समय थके-थके रहते हैं वे उन्नति नहीं कर सकते। अतः चलना चाहिए, डोलना चाहिए, गतिशील होना चाहिए।

१७. जो इसे इस प्रकार समझ जाय उसे आप लोगों को कहना चाहिए- "आप (राजा के प्रति अपने ऋण से) उऋण होने की ओर ध्यान दें- ऐसी-ऐसी देवानांप्रिय की अनुशास्ति है।

१८. "इसका सम्यक रूप से प्रतिपादन करना बड़ा फलदायक है जबकि प्रतिपादन न करना बड़ा विनाशकारक है।

१९. "क्योंकि (जो लोग) प्रतिपादन नहीं कर पाते हैं उन्हें न तो स्वर्ग की प्राप्ति होती है, और न ही राजा की कृपा।"

२०. इस बारे में मैं इतना अधिक क्यों सोचता हूं उसका कारण यह है कि इस काम से दो फल प्राप्त होते हैं-

२१. इसका सम्यक प्रतिपादन करने से स्वर्ग प्राप्त करोगे और मेरे ऋण से उऋण हो जाओगे।

२२. और इस लिखावट को तिष्य नक्षत्र में (सभी द्वारा) सुना जाना चाहिए।'

२३. अंतला पि च तिसेन खनसि खनसि एकेन पि सोतविय

२४. हेवं च कलंतं तुफे चघथ संपटिपादयितवे

२५. एताये अठाये इयं लिपि लिखित हिद एन नगलवियोहालका सस्वे समयं यूजेवू ति.... नस अकस्मा पलिबोधे व अकस्मा पलिकिलेसे व नो सिया ति

२६. एताये च अठाये हकं.... मते पंचसु पंचसु वसेसु निखामयिसामि ए अखखसे अचंडे सखिनालंभे होसति एतं अठं जानितु.... तथा कलंति अथ मम अनुसथी ति

२७. उजेनिते पि चु कुमाले एताये व अठाये निखामयिस.... हेदिसमेव कं नो च अतिकामयिसति तिंनि वसानि

२८. हेमेव तखसिलाते पि

२९. अदा अ.... ते महामाता निखमिसंति अनुसयानं तदा अहापयितु अतने कंमं एतं पि जानिसंति तं पि तथा कलंति अथ लाजिने अनुसथी ति

जौगड शिला : द्वितीय पृथक अभिलेख

१. देवानंपिये हेवं आह

२. समापायं महमता लाजवचनिक वतविया

३. अं किछि दखामि हकं तं इछामि हकं किंति कं कमन पटिपातयेहं दुवालते च आलभेहं

४. एस च मे मोखियमत दुवाल एतस अथस अं तुफेसु अनुसथि

५. सवमुनिसा मे पजा

२३. और तिष्य (के दिनों) के बीच में भी जैसे-जैसे अवसर मिलता रहे वैसे-वैसे भले ही एक व्यक्ति द्वारा भी इसे सुना जाना चाहिए।

२४. और ऐसा करते हुए आप सम्यक प्रतिपादन करने में समर्थ हो जाओगे।

२५. यहां पर यह लिखावट इस प्रयोजन से लिखी गयी है जिससे कि नगर-व्यवहारक हर समय (सम्यक प्रतिपादन में) लगे रहें और लोगों के अकारण बंधन अथवा उनकी अकारण यातना न हों।

२६. और इस प्रयोजन के लिए मैं पांच-पांच वर्षों के अंतराल पर (एक-एक महामात्र को) जो मृदुल स्वभाव का, शांतप्रकृति और नरमी से काम लेने वाला होगा यह जानने के लिए भिजवाया करूंगा कि क्या (नगर-व्यवहारक) वैसा (ही) कर रहे हैं जैसी कि मेरी अनुशास्ति है।

२७. और उज्जयिनी से भी कुमार इसी प्रयोजन के लिए ऐसे ही (अधिकारि-) वर्ग को भिजवाया करेगा और इसमें तीन वर्ष का अंतराल नहीं होने देगा।

२८. ऐसे ही तक्षशिला से भी।

२९. जब..... वे महामात्र दौरे पर निकलेंगे तब अपने (सामान्य) कार्य की अवहेलना न करते हुए, इसकी भी जानकारी किया करेंगे कि क्या (नगर-व्यवहारक) इस बारे में भी वैसा ही कर रहे हैं जैसी कि राजा की अनुशास्ति है।

जौगड शिला : द्वितीय पृथक अभिलेख

१. देवानांप्रिय ऐसा कहते हैं-

२. समापा में अवस्थित महामात्रों को राजा के हवाले से (यह) बतलाया जाय-

३. मैं जो कुछ (उचित) समझता हूं उसके बारे में चाहता हूं कि कैसे इसे क्रियान्वित करूं और ढंग से इसकी शुरूआत करूं।

४. और मेरे विचार में इसका मुख्य उपाय यह है कि इस प्रयोजन के लिए मैं आपको अनुदेश दूं।

५. सारे मनुष्य मेरी संतान हैं।

६. अथ पजाये इछामि किंति मे सवेणा हितसुखेन युजेयू अथ पजाये
इछामि किंति मे सवेन हितसुखेन युजेयू ति हिदलोगिकपाललोकिकेण हेवंमेव मे
इछ सवमुनिसेसु

७. सिया अंतानं अविजितानं किछांदे सु लाजा अफेसू तिं

८. एताका वा मे इछ अंतेसु पापुनेयु लाजा हेवं इछति अनुविगिन हेवं
ममियाये अस्वसेयु च मे सुखमेव च लहेयू ममते नो खं हेवं च पापुनेयु खमिसति
ने लाजा ए सकिये खमितवे ममं निमितं च धंमं चलेयू ति हिदलोगं च पललोकं
च आलाधयेयू

९. एताये च अठाये हकं तुफेनि अनुसासामि अननं एतकेन हकं तुफेनि
अनुसासितु छंदं च वेदितु आ मम थिति पटिना च अचल

१०. स हेवं कटू कंमं चलितविये अस्वासनिया च ते एन ते पापुनेयु अथा
पित हेवं ने लाजा ति अथ अतानं अनुकंपति हेवं अफेनि अनुकंपति अथा पजा
हेवं मये लाजिने

११. तुफेनि हकं अनुसासित छांदं च वेदित आ मम थिति पटिना चा अचल
सकल्दंसाआयुतिकं होसामी एतसि अर्थासि

१२. अलं हि तुफे अस्वासनाये हितसुखाये च तेसं
हिदलोगिकपाललोकिकाये

१३. हेवं च कलंतं स्वगं च आलाधयिसथ मम च आननंयं एसथ

१४. एताये च अथाये इयं लिपी लिखित हिद एन महामाता सास्वतं समं
युजेयू अस्वासनाये च धंमचलनाये च अंतानं

१५. इयं च लिपी अनुचातुंमासं सोतविया तिसेन

६. जैसे मैं अपनी संतान के लिए कामना करता हूं कि वे कैसे इहलोक तथा परलोक के सर्वप्रकार के हित-सुख के लाभी हों, वैसे ही सब मनुष्यों के लिए मेरी मनोकामना है।

७. अ-विजित सीमावर्ती लोगों के मन में यह जिज्ञासा हो सकती है कि हमारे बारे में राजा क्या सोचते हैं।

८. सीमावर्ती लोगों के बारे में मेरी इतनी अभिलाषा (उन तक) पहुँचानी चाहिए कि राजा ऐसा चाहते हैं कि वे उद्विग्न न हों, मेरे प्रति आश्वस्त हों और मेरे से सुख ही पायें, दुःख नहीं। और उन्हें यह पता चले कि राजा उन्हें यथासंभव क्षमा कर देंगे और वे मेरे निमित्त धर्म पर चलें जिससे कि वे इहलोक और परलोक का सुख प्राप्त कर सकें।

९. और इसी प्रयोजन के लिए मैं आपको अनुदेश देता हूं जिससे कि इससे (उनके प्रति मुझ पर जो ऋण है मैं उससे) उऋण हो सकूं। मैं आपको अनुदेश देता हूं और अपनी मनोकामना जतलाता हूं जो कि मेरी स्थिर वा अटल प्रतिज्ञा है।

१०. इसलिए इस प्रकार आचरण करते हुए आपको (अपना) कर्त्तव्य-(पालन) करना चाहिए और उनको आश्वासन देना चाहिए जिससे वे समझ जायं कि राजा हमारे लिए वैसे ही हैं जैसे कि पिता, जैसे वह अपने पर कृपा करते हैं वैसे ही हमारे पर कृपा करते हैं, हम राजा के लिए वैसे ही हैं जैसे कि (उनकी अपनी) प्रजा।

११. आपको अनुदेश देकर और अपनी मनोकामना जतला कर, जो कि मेरी स्थिर वा अटल प्रतिज्ञा है, मैं इस प्रयोजन के लिए सारे देश में अधिकारी नियुक्त करूंगा।

१२. क्योंकि आप उन्हें आश्वस्त करने और इहलोक तथा परलोक का हित-सुख प्राप्त कराने की क्षमता रखते हैं।

१३. और ऐसा करते हुए (आप) स्वर्ग-लाभ करेंगे और मेरे ऋण से उऋण हो पाएंगे।

१४. और इस प्रयोजन के लिए यहां पर लिखावट लिखी गयी है जिससे कि महामात्र हर समय सीमावर्ती लोगों को भरोसा दिलाने और धर्म में प्रवृत्त करने के काम में लगे रहें।

१५. और इस लिखावट को (सभी द्वारा) प्रत्येक चातुर्मास में तिष्य (नक्षत्र) के दिन सुना जाना चाहिए।

१६. अंतला पि च सोतविया

१७. खने संतं एकेन पि सोतविया

१८. हेवं च कलंतं चयथ संपटिपातयितवे

१६. और (तिष्य के दिनों के) बीच बीच में भी सुना जाना चाहिए।

१७. अवसर मिलने पर भले ही एक व्यक्ति द्वारा ही सुना जाना चाहिए।

१८. और ऐसा करते हुए (आप) सम्यक प्रतिपादन (की दिशा में) यत्नशील होंगे।

खंड (२)

लघु शिलाओं पर उत्कीर्ण अभिलेख

मूल अभिलेख

लघु शिला : रूपनाथ

१. देवानंपिये हेवं आहा

२. सातिरकेकानि अढतियानि व य सुमि प्रकास सके

३. नो चु बाढि पकते

४. सातिलेके चु छवछरे य सुमि हकं सघ उपेते बाढि च पकते

५. या इमाय कालाय जंबुदिपसि अमिसा देवा हुसु ते दानि मिसा कटा

६. पकमसि हि एस फले

७. नो च एसा महतता पापोतवे खुदकेन पि पकममिनेना सकिये पिपुले पा स्वगे आरोधेवे

८. एतिय अठाय च सावने कटे खुदका च उडाला च पकमतु ति अता पि च जानंतु इय पकरा व किति चिरठितिके सिया

९. इय हि अठे वढि वढिसिति विपुल च वढिसिति अपलधियेना दियढि वढिसत

१०. इय च अठे पवतिसु लेखापेत वालत

११. हध च अथि सालाठभे सिलाठंभसि लाखापेतवय त

१२. एतिना च वयजनेना यावतक तुपक अहाले सवर विवसेतवाय ति

१३. व्युठेना सावने कटे

१४. २०० ५० ६ सत विवासा त

हिंदी रूपांतर

लघु शिला : रूपनाथ

१. देवानांप्रिय ऐसा कहते हैं।

२. अढ़ाई वर्ष से कुछ अधिक समय हो गया है जब से मैं प्रकट रूप से उपासक हूं।

३. परंतु मैंने डट कर पराक्रम नहीं किया।

४. परंतु एक वर्ष से कुछ अधिक समय हो गया है जब से मैं संघ हो गया हूं और खूब पराक्रम किया है।

५. जो इस काल में जंबुद्वीप में देवगण (मनुष्यों से) विलग हो गये थे वे अब (मेरे द्वारा उनसे) मिलवा दिये गये हैं।

६. यह पराक्रम का ही फल है।

७. और यह (केवल) बड़े (आदमी) के ही बस में नहीं है (बल्कि) पराक्रम करने वाला छोटा (आदमी) भी, अथाह होने पर भी, स्वर्ग प्राप्त कर सकता है।

८. और इस प्रयोजन के लिए यह घोषणा की गयी है कि छोटे वा बड़े (सभी) पराक्रम करें और (मेरे) सीमावर्ती लोग भी जान जायं कि यही पराक्रम चिरस्थायी हो।

९. क्योंकि यह उद्देश्य आगे-से-आगे बढ़ेगा और खूब बढ़ेगा – कम-से-कम ड्यौढ़ा बढ़ जायगा।

१०. और इस विषय को सुयोग (उपस्थित) होने पर चट्टानों पर लिखवायें।

११. और यहां (अर्थात, मेरे साम्राज्य में जहां कहीं भी) शिलास्तंभ हों (वहां-वहां) शिलास्तंभों पर इसे लिखवाया जाना चाहिए।

१२. और इस (घोषणा की) इबारत के अनुसार, जितनी (दूर तक) आपका अधिकार-क्षेत्र हो, (आप) उन सब स्थानों पर (अपने अधिकारियों को) भिजवायें।

१३. यह घोषणा प्रवास-काल में की गयी।

१४. (तब तक) २५६ पड़ाव (अर्थात, रात्रि-काल) बीत चुके थे।

लघु शिला : कोलकाता - बैराट

१. प्रियदसि लाजा मागधे संघं अभिवादेतूनं आहा अपाबाधतं च फासुविहालतं चा

२. विदिते वे भंते आवतके हमा बुधसि धंमसि संघसी ति गालवे चं प्रसादे च

३. ए केचि भंते भगवता बुधेन भासिते सर्वे से सुभासिते वा

४. ए चु खो भंते हमियाये दिसेया हेवं सधंमे चिलठितीके होसती ति अलहामि हकं तं वातवे

५. इमानि भंते धंमपलियायानि विनयसमुकसे अलियवसाणि अनागतभयानि मुनिगाथा मोनेयसूते उपतिसपसिने ए चा लाघुलोवादे मुसावादं अधिगिच्य भगवता बुधेन भासितं एतानि भंते धंमपलियायानि इछामि किंति बहुके भिखुपाये चा भिखुनिये चा अभिखिनं सुनेयु चा उपधालयेयू चा

६. हेवंमेवा उपासका चा उपासिका चा

७. एतेनि भंते इमं लिखापयामि अभिप्रेतं मे जानंतू ति

लघु शिला : ब्रह्मगिरि

१. सुवंणगिरीते अयपुतस महामाताणं च वचनेन इसिलसि महामाते आरोगियं वतविया हेवं च वतविया

२. देवाणंपिये आणपयति

३. अधिकानि अढातियानि वसानि य हकं.... सके

४. नो तु खो बाढं प्रकंते हुसं एकं सवछरं

५. सातिरेके तु खो संवछरें यं मया संघे उपयीते बाढं च मे पकंते

६. इमिना चु कालेन अमिसा समाना मुनिसा जंबुदीपसि मिसा देवेहि

७. पकमस हि इयं फले

लघु शिला : कोलकाता - बैराट

१. मगध के राजा प्रियदर्शी संघ को अभिवादन करके उनके स्वास्थ्य और सुखविहार की कामना करते हैं।

२. आप भदंतगण को विदित ही है कि मेरे मन में बुद्ध, धर्म और संघ के प्रति कितना आदर एवं अनुराग है।

३. हे भदंतगण! जो कुछ भगवान बुद्ध ने कहा है वह सब सुभाषित ही है।

४. परंतु, भदंतगण! जैसा कि मुझे सुझाई देता है कि सद्धर्म ऐसे चिरस्थायी होगा, उस बारे में मैं यह बतलाना चाहता हूं-

५. भदंतगण! यह परियत्ति है- विनयसमुकसे, अलियवसाणि, अनागतभयानि, मुनिगाथा, मोनेयसूते, उपतिसपसिने और ऐसे ही लाघुलोवाद में मुसावाद के बारे में भगवान बुद्ध ने जो कुछ कहा है। इस परियत्ति को, भदंतगण! मैं चाहता हूं कि बहुत से पूज्य भिक्षु एवं भिक्षुणियां बार-बार सुनें और धारण करें।

६. और इसी प्रकार उपासक तथा उपासिकाएं (भी)।

७. भदंतगण! यह इस प्रयोजन से लिखवाता हूं जिससे कि (लोग) मेरा अभिप्राय जान जायं।

लघु शिला : ब्रह्मगिरि

१. सुवर्णगिरि से कुमार तथा महामात्रों के हवाले से इसिला के महामात्रों के आरोग्य के बारे में पूछा जाय और (तत्पश्चात) यह कहा जाय-

२. देवानांप्रिय की आज्ञा है-

३. कि अढ़ाई वर्ष से अधिक (समय) हुआ है जब से मैं उपासक हूं।

४. परंतु मैंने एक वर्ष तक निःसंदेह डट कर पराक्रम नहीं किया।

५. परंतु एक वर्ष से कुछ अधिक समय हुआ है जब से मैं संघ हो गया हूं और खूब पराक्रम कर रहा हूं।

६. इस काल में जंबुद्वीप में (देवगण से) विलग हुए-हुए मनुष्य उनसे मिलवा दिये गये हैं।

७. यह पराक्रम का ही फल है।

८. नो हीयं सक्ये महात्पेनेव पापोतवे कामं तु खो खुदकेन पि पकमि... णेण विपुले स्वगे सक्ये आराधेतवे

९. एतायठाय इयं सावणे सावापिते.... महात्पा च इमं पकमेयु ति अंता च मे जानेयु चिरठितीके च इयं पक....

१०. इयं च अठे वढिसिति विपुलं पि च वढिसिति अवरधिया दियढिं वढिसिति

११. इयं च सावणे सावापिते व्यूथेन

१२. २०० ५० ६

१३. से हेवं देवाणंपिये आह

१४. मातापितिसु सुसूसितविये हेमेव गरुसु प्राणेसु द्रढितव्यं सचं वतवियं से इमे धंमगुणा पवतितविया

१५. हेमेव अंतेवासिना आचरिये अपचायितविये ञातिकेसु च कं य.... हं पवतितविये

१६. एसा पोराणा पकिती दीघावुसे च एस

१७. हेवं एस कटिविये

१८. चपडेन लिखिते लिपिकरेण

८. निश्चय ही यह केवल बड़े (आदमी) द्वारा ही प्राप्त नहीं किया जा सकता है बल्कि, चाहना होने पर, छोटे (आदमी) द्वारा भी पराक्रम करते हुए, नि:संदेह, विपुल स्वर्ग प्राप्त किया जा सकता है।

९. इस प्रयोजन के लिए यह प्रज्ञापन करवाया गया है कि (छोटे) और बड़े (सभी) यह पराक्रम करें और मेरे सीमावर्ती लोग भी (इसे) जान जायं और यह पराक्रम चिरस्थायी हो।

१०. और यह उद्देश्य बढ़ेगा और खूब बढ़ेगा - कम से कम डेढ़ गुना (बढ़ जायगा)।

११. और यह प्रज्ञापन (मेरे) प्रवास-काल में किया गया है।

१२. (इस समय तक) २५६ (रात्रि-विश्राम किये जा चुके हैं)।

१३. और भी देवानांप्रिय का यह कहना है -

१४. माता-पिता की सेवा करनी चाहिए (और) ऐसे ही गुरुजनों की, प्राणियों के प्रति (दयाभाव को) दृढ़ करना चाहिए, सच बोलना चाहिए - तो इन धर्मों के गुणों को व्यवहार में उतारना चाहिए।

१५. इसी प्रकार (आचार्य के सान्निध्य में रहने वाले) शिष्य द्वारा आचार्य का आदर-सत्कार किया जाना चाहिए और जातिभाइयों के साथ यथायोग्य बर्ताव किया जाना चाहिए।

१६. यह सनातन रीति है और इससे आयु बढ़ती है।

१७. इसी के अनुसार (कार्य) करना चाहिए।

१८. लिपिकार चपड द्वारा लिखा गया।

खंड (३)

लघु स्तंभों पर उत्कीर्ण अभिलेख

मूल अभिलेख

लघु स्तंभ : सारनाथ

१-३. देवा.... ए ल.... पाट.... ये केनपि संघे भेतवे

४. ए चु खो भिखू वा भिखुनि वा संघं भाखति से ओदातानि दुसानि संनंधापयिया आनावाससि आवासयिये

५. हेवं इयं सासने भिखुसंघसि च भिखुनिसंघसि च विनपयितविये

६. हेवं देवानंपिये आहा

७. हेदिसा च इका लिपी तुफाकंतिकं हुवाति संसलनसि निखिता इकं च लिपिं हेदिसमेव उपासकानंतिकं निखिपाथ

८. ते पि च उपासका अनुपोसथं यावु एतमेव सासनं विस्वंसयितवे अनुपोसथं च धुवाये इकिके महामाते पोसथाये याति एतमेव सासनं विस्वंसयितवे आजानितवे च

९. आवते च तुफाकं आहाले सवत विवासयाथ तुफे एतेन वियंजनेन

१०. हेमेव सवेसु कोटविषवेसु एतेन वियंजनेन विवासापयाथा

हिंदी रूपांतर

लघु स्तंभ : सारनाथ

१. देवा (नांप्रिय) .....

२. ..... पाट (लिपुत्र).....

३. ..... किसी के भी द्वारा संघ का भेदन (नहीं किया जा सकता)।

४. परंतु यदि कोई भिक्षु अथवा भिक्षुणी संघ का भेदन करे तो उसे श्वेत वस्त्र पहनवा कर (भिक्षुओं-भिक्षुणियों के) अयोग्य स्थान पर बसाया जाना चाहिए।

५. इस प्रकार यह आदेश भिक्षुओं के संघ में और भिक्षुणियों के संघ में जानकारी में लाया जाना चाहिए।

६. देवानांप्रिय ऐसा कहते हैं -

७. इस प्रकार की एक लिखावट आपके पास चौपाल में रखी हुई हो और ऐसी ही एक लिखावट उपासकों के पास रखें।

८. और वे उपासक भी हर उपोसथ के दिन इस आदेश के प्रति (अपना) विश्वास जमाने के लिए आयें और निश्चित रूप से प्रत्येक उपोसथ के दिन प्रत्येक महामात्र इसी आदेश के प्रति (अपना) विश्वास जमाने और इसे पूरी तरह समझने के लिए उपोसथ में आयें।

९. और जहां तक आपका अधिकार-क्षेत्र है, वहां तक सब जगह यह आदेश लेकर (आप) दौरा करें।

१०. और इसी प्रकार सब दुर्गम प्रदेशों में इस आदेश के साथ (अपने अधीनस्थ अधिकारियों को) भिजवायें।

लघु स्तंभ : रुम्मिनदेई

१. देवानपियेन पियदसिन लाजिन वीसतिवसाभिसितेन अतन आगाच महीयिते हिद बुधे जाते सक्यमुनी ति

२. सिला विगडभी चा कालापित सिलाथभे च उसपापिते हिद भगवं जाते ति

३. लुंमिनिगामे उबलिके कटे अठभागिये च

लघु स्तंभ : निगली सागर

१. देवानंपियेन पियदसिन लाजिन चोदसवसाभिसितेन बुधस कोनाकमनस थुबे दुतियं वढिते

२. ..... साभिसितेन च अतन आगाच महीयिते..... पापिते

लघु स्तंभ : रुम्मिनदेई

१. अभिषेक के बीस वर्ष हो चुकने पर देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा स्वयं (यहां) आकर पूजन किया गया क्योंकि यहां पर शाक्यमुनि बुद्ध का जन्म हुआ था।

२. (उनके द्वारा यहां पर) पत्थर की बहुत बड़ी दीवार बनवायी गयी और शिला-स्तंभ खड़ा करवाया गया क्योंकि यहां पर भगवान की उत्पत्ति हुई थी।

३. लुंबिनी ग्राम के धार्मिक कर माफ कर दिये गये और मालगुजारी के रूप में केवल आठवां हिस्सा (रखा गया)।

लघु स्तंभ : निगली सागर

१. अभिषेक के चौदह वर्ष हो चुकने पर देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा कोणागमन बुद्ध का स्तूप दूसरी बार बड़ा करवाया गया।

२. और अभिषेक के (बीस) वर्ष हो चुकने पर (उन्होंने यहां) स्वयं आकर पूजा की (और एक शिला-स्तंभ खड़ा) करवाया।

खंड (४)

स्तंभों पर उत्कीर्ण अभिलेख

मूल अभिलेख

स्तंभ देहली-टोपरा : प्रथम अभिलेख

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा

२. सडुवीसतिवसअभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापिता

३. हिदतपालते दुसंपटिपादये अंनत अगाया धंमकामताया अगा
पलीखाया अगाय सुसूसाया अगेन भयेना अगेन उसाहेना

४. एस चु खो मम अनुसथिया धंमापेखा धंमकामता चा सुवे सुवे वढि
वढीसति चेवा

५. पुलिसा पि च मे उकसा चा गेवया चा मझिमा चा अनुविधीयं
संपटिपादयंति चा अलं चपलं समादपयितवे

६. हेमेवा अंतमहामाता पि

७. एस हि विधि या इयं धंमेन पालना धंमेन विधाने धंमेन सुखियना धं
गोती ति

स्तंभ देहली-टोपरा : द्वितीय अभिलेख

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा

२. धंमे साधू कियं चु धंमे ति

३. अपासिनवे बहु कयाने दया दाने सचे सोचये

४. चखुदाने पि मे बहुविधे दिंने

५. दुपदचतुपदेसु पखिवालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ पानदाखिनं

६. अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि

७. एताये मे अठाये इयं धंमलिपि लिखापिता हेवं अनुपटिपजं
चिलंथितिका च होतू ती ति

८. ये च हेवं संपटिपजीसति से सुकटं कछती ति

हिंदी रूपांतर

स्तंभ देहली-टोपरा : प्रथम अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं –

२. अभिषेक के २६ वर्ष हो चुकने पर मेरे द्वारा यह धर्मलिपि लिखवायी गयी है।

३. बिना तीव्र धर्म-कामना, कठोर परीक्षा, उत्कृष्ट सेवा, आत्ययिक भय और अदम्य उत्साह के इहलोक तथा परलोक का सुख प्राप्त करना कठिन है।

४. और निश्चय ही मेरी अनुशास्ति के कारण यह धर्म की अपेक्षा और धर्म की कामना दिन प्रतिदिन बढ़ी है और बढ़ती ही चली जायगी।

५. और ऊंची, नीची तथा मध्यम श्रेणी के मेरे (राज-) पुरुष भी इसका अनुसरण और सम्यक रूप से प्रतिपादन करते हैं जिससे वे चंचल चित्त वालों को (इस ओर) प्रेरित करने में समर्थ हैं।

६. ऐसे ही मेरे अंतमहामात्र भी।

७. क्योंकि (इन सब के लिए मेरे द्वारा) यही विहित है – धर्मानुसार पालन (-पोषण), धर्मानुसार शासन, धर्मानुसार सुख पहुँचाना (और) धर्मानुसार रक्षा।

स्तंभ देहली-टोपरा : द्वितीय अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं –

२. धर्म श्रेष्ठ है, परन्तु धर्म है क्या?

३. पाप-कर्मों से दूर रहना, खूब सत्कर्म करना, दया, दान, सत्य (और) शुचिता (पवित्रता)।

४. मेरे द्वारा अनेक प्रकार के चक्षुदान भी किये गये हैं।

५. दुपायों और चौपायों पर, और खे-चरों तथा जल-चरों पर प्राणदान देने तक मैंने नाना प्रकार के उपकार किये हैं।

६. मेरे द्वारा और भी बहुत से कुशल कार्य किये गये हैं।

७. मेरे इस प्रयोजन के लिए यह धर्मलिपि लिखवायी गयी है कि (लोग) इसके अनुसार आचरण करें और यह चिरस्थायी हो।

८. और जो इसके अनुसार सम्यक आचरण करेगा वह सुकृत (सत्कर्म) (ही) करेगा।

स्तंभ देहली-टोपरा : तृतीय अभिलेख

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा

२. कयानंचि देखति इयं मे कयाने कटे ति

३. नो मिन पापं देखति इयं मे पापे कटे ति इयं वा आसिनवे नामा हि

४. दुपटिवेखे चु खो एसा

५. हेवं चु खो एस देखिये

६. इमानि आसिनवगामीनि नाम अय चंडिये निठूलिये कोधे माने इस्से कालुसेन व हके मा पलिभसयिसं

७. एस बाढ देखिये

८. इयं मे हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये

स्तंभ देहली-टोपरा : चतुर्थ अभिलेख

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा

२. सडुवीसतिवसअभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापिता

३. लजूका मे बहुसु पानसतसहसेसु जनसि आयता

४. तेसं ये अभिहाले वा दंडे वा अतपतिये मे कटे किंति लजूका अस्वथ अभीता कंमानि पवतयेवू जनस जानपदसा हितसुखं उपदहेवू अनुगहिनेवु चा

५. सुखीयनदुखीयनं जानिसंति धंमयुतेन च वियोवदिसंति जनं जानपदं किंति हिदतं व पालतं च आलाधयेवू ति

६. लजूका पि लघंति पटिचलितवे मं

७. पुलिसानि पि मे छंदनानि पटिचलिसंति

स्तंभ देहली-टोपरा : तृतीय अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं-

२. (मनुष्य) (अपना) भला काम ही देखता है (और अपने मन में सोचता है:) "मैंने यह भला काम किया है।"

३. (वह अपना) बुरा काम जरा भी नहीं देखता (और अपने मन में नहीं सोचता है:) "मैंने यह पाप-कर्म किया है", अथवा "यह आसिनव (बांधने वाला कर्म) है।"

४. इसकी पहचान करना बड़ा कठिन कार्य है।

५. परंतु इसे, निःसंदेह, इस प्रकार देखना चाहिए-

६. प्रचंडता, निष्ठुरता, क्रोध, अभिमान (और) ईर्ष्या - ये क्लेश को प्राप्त कराने वाले हैं। इस कारण से मैं कहीं पतित न हो जाऊं।

७. इसे अच्छी तरह जान लेना चाहिए-

८. यह मेरे ऐहिक (लाभ) के लिए है और यह दूसरा मेरे पारलौकिक (लाभ) के लिए।

स्तंभ देहली-टोपरा : चतुर्थ अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं-

२. अभिषेक के २६ वर्ष हो चुकने पर मेरे द्वारा यह धर्मलिपि लिखवायी गयी है।

३. मेरे 'रज्जुक' (नाम के अधिकारी) कई लाख प्राणियों और मनुष्यों के बीच नियुक्त हैं।

४. उनको अभियोग चलाने अथवा दंड देने के मामलों में मैंने उन्हीं के विवेक पर छोड़ दिया है। क्यों? (जिससे कि) रज्जुक आश्वस्त और निर्भय होकर कर्मों में प्रवृत्त हों, देशवासियों को हित-सुख प्रदान करें और (उनका) उपकार करें।

५. वे सुख-दुःख (के कारणों) को जानेंगे और धर्म का पालन करने वाले (व्यक्तियों की सहायता से) देशवासियों को प्रेरित करेंगे जिससे कि वे इस लोक और परलोक (का सुख) प्राप्त कर सकें।

६. रज्जुक भी मेरी आज्ञा का पालन करने के लिए उत्सुक रहते हैं।

७. (सामान्य) (राज-) पुरुष भी मेरी इच्छाओं के अनुसार चलेंगे।

८. और दे भी कुछेक को प्रेरित करेंगे जिससे कि मेरे रज्जुक मुझे प्रसन्न कर सकें।

९. जैसे कोई (व्यक्ति) (अपनी) संतान को (किसी) निपुण धाय को सौंप कर आश्वस्त हो जाता है कि (वह) निपुण धाय मेरी संतान का भली प्रकार लालन-पालन कर सकेगी, ऐसे ही मेरे रज्जुक लोगों के हित-सुख के लिए (नियुक्त) किये गये हैं।

१०. मैंने इसलिए रज्जुकों को अभियोग चलाने तथा दंड देने के मामलों में उनके विवेक पर छोड़ दिया है जिससे कि ये निडर और आश्वस्त होकर प्रसन्न चित्त से (अपने-अपने) कार्यों में लग जायं।

११. यह वांछनीय है - क्या? कि न्यायिक प्रक्रिया और दंड देने में एकरूपता हो।

१२. और मेरा आदेश तो यहां तक है कि कारागार में बंदी बनाये गये मनुष्यों में से दंड के फलस्वरूप जिनका वध होना है उन्हें मेरी ओर से तीन दिन की मोहलत है।

१३. (इस अवधि में) उनके (सार्थक) जीवन के लिए उनके जाति वाले कोई लेख उनको ध्यान करायेंगे और ध्यान कराने वाला न होने पर वे दान दे सकेंगे अथवा परलोक में शांति पाप्त करने के लिए उपवास कर सकेंगे।

१४. क्योंकि मेरी इच्छा है कि (वे) इस प्रकार कैद के दिनों में भी पारलौकिक सुख के लिए चलशील रहें।

१५. और (इस प्रकार) लोगों में विविध प्रकार के धर्माचरण, (आत्म-) संयम और दान देने की प्रवृत्ति बढ़ती है।

स्तंभ देहली-टोपरा : पंचम अभिलेख

१. देवानांपिये पियदसी राजा ऐसा कहते हैं -

२. (मेरे) अभिषेक के २६ वर्ष हो चुकने पर मेरे द्वारा इन प्राणियों को 'अवध्य' घोषित किया गया है, जैसे - तोता, मैना, अरुण, चकवा, हंस, नंदीमुख, गेलाट, जतुका, छोटी चींटी, कछुवी, बिना हाड़ वाला मछ, वेदवेयक, गंगापुपुटक, शंकुल-मत्स्य, कछुवा और शल्यक, पर्णशश, बारहसिंगा, सांड, ओकपिंड, गैंडा, श्वेत कपोत, ग्राम कपोत (और) सभी चौपाये जो उपयोग में नहीं आते और न खाये जाते हैं।

३. ..... एळका चा सूकली चा गभिनी व पायमीना व अवधिय- ए-
तके पि च कानि आसंमासिके

४. वधिकुकुटे नो कटविये

५. तुसे सजीवे नो झापेतविये

६. दावे अनठाये वा विहिसाये वा नो झापेतविये

७. जीवेन जीवे नो पुसितविये

८. तीसु चातुंमासीसु तिसायं पुंनमासियं तिंनि दिवसानि चावुदसं पंनडसं
पटिपदाये धुवाये चा अनुपोसथं मछे अवधिये नो पि विकेतविये

९. एतानि येवा दिवसानि नागवनसि केवटभोगसि यानि अंनानि पि
जीवनिकायानि न हंतवियानि

१०. अठमीपखाये चावुदसाये पंनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु
चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने नो नीलखितविये अजके एडके सूकले ए वा पि
अंने नीलखियति नो नीलखितविये

११. तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासिपखाये अस्वसा गोनसा लखं
नो कटविये

१२. यावसडुवीसतिवसअभिसितेन मे एताये अंतलिकाये पंनवीसति
बंधनमोखानि कटानि

स्तंभ देहली-टोपरा : षष्ठ अभिलेख

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं अहा

२. दुवाडसवसअभिसितेन मे धंमलिपि लिखापिता लोकसा हितसुखाये से
अपहटा तं तं धंमवढि पापोवा

३. हेवं लोकसा हितसुखे ति पटिवेखामि अथ इयं नातिसु हेवं पतियासंनेसु
हेवं अपकटेसु किमं कानि सुखं अवहामी ति तथ च विदहामि

३. गर्भिणी अथवा दूध पिलाने वाली (बकरी,) भेड़ और सूकरी (भी)
अवध्य हैं- और छः माह तक की आयु वाले इनके बच्चे भी।

४. मुर्गों को बधिया नहीं किया जाना चाहिए।

५. जिस भूसे में जीव हों उसे नहीं जलाया जाना चाहिए।

६. बिना किसी प्रयोजन के अथवा (प्राणियों की) विहिंसा के लिए जंगल
को आग नहीं लगानी चाहिए।

७. जीव से जीव का पोषण नहीं किया जाना चाहिए।

८. तीनों चौमासों में और तैष की पूनम के तीन दिनों तक- अर्थात
चौदहवीं, पंद्रहवीं और प्रतिपदा को- और उपोसथ के दिनों में ध्रुव-नियम के
समान मछली न तो मारी जानी चाहिए और न ही इसका विक्रय होना चाहिए।

९. इन्हीं दिनों में हस्तिवन में, अथवा मछुआरों के तालाब में, जो कोई
दूसरे जीव-समुदाय हों उनका भी हनन नहीं किया जाना चाहिए।

१०. प्रत्येक पक्ष की अष्टमी, चौदस और पंचदशी को, तिष्य और पुनर्वसु
के दिन, तीनों चौमासों की पूर्णिमा के दिन और शुभ दिनों में बैलों को बधिया
नहीं किया जाना चाहिए। (इसी प्रकार) बकरों, मेढ़ों, सूअरों, अथवा अन्य
जानवरों को जिनको (प्रायः) बधिया किया जाता है, बधिया नहीं किया जाना
चाहिए।

११. तिष्य, पुनर्वसु, ऋतुओं की पूर्णिमाओं के दिन, और प्रत्येक ऋतु की
पूर्णिमा वाले पक्ष में घोड़ों और बैलों को दागा नहीं जाना चाहिए।

१२. छब्बीस वर्ष पहले अपने अभिषेक के समय से लेकर इस अंतराल में
मेरे द्वारा पच्चीस बार (बंदियों की) बंधन से रिहाई करवायी गयी है।

स्तंभ देहली-टोपरा : षष्ठ अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं-

२. अभिषेक के बारह वर्ष हो चुकने पर मेरे द्वारा लोगों के हित-सुख के
लिए धर्मलिपि लिखवायी गयी जिससे कि वे उसकी अवज्ञा न करते हुए धर्म
में अनेक प्रकार की पुष्टता प्राप्त कर सकें।

३. (यह सोच कर कि) "इसी प्रकार लोगों का हित-सुख हो सकता है", मैं
केवल (अपने) जातिभाइयों का ही ध्यान नहीं रखता हूं, अपितु उनका भी जो
समीप हैं अथवा दूर हैं, जिससे कि मैं उन्हें सुख पहुँचा सकूं और (फिर) मैं
वैसी ही व्यवस्था कर देता हूं।

४. हेमेवा सवनिकायेसु पटिवेखामि
५. सवपासंडा पि मे पूजिता विविधाय पूजाया
६. ए चु इयं अतना पचूपगमने से मे मोख्यमते
७. सडुवीसतिवसअभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापिता

स्तंभ देहली-टोपरा : सप्तम अभिलेख

१. देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा
२. ये अतिकंतं अंतलं लाजाने हुसु हेवं इछिसु कथं जने धंमवढिया वढेया नो चु जने अनुलुपाया धंमवढिया वढिथा
३. एतं देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा
४. एस मे हुथा
५. अतिकंतं च अंतलं हेवं इछिसु लाजाने कथं जने अनुलुपाया धंमवढिया वढेया ति नो च जने अनुलुपाया धंमवढिया वढिथा
६. से किनसु जने अनुपटिपजेया
७. किनसु जने अनुलुपाया धंमवढिया वढेया ति
८. किनसु कानि अभ्युंनामयेहं धंमवढिया ति
९. एतं देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा
१०. एस मे हुथा
११. धंमसावनानि सावापयामि धंमानुसथिनि अनुसासामि
१२. एतं जने सुतु अनुपटीपजीसति अभ्युंनमिसति धंमवढिया च बाढं वढिसति
१३. एताये मे अठाये धंमसावनानि सावापितानि धंमानुसथिनि विविधानि आनपितानि य..... सा पि बहुने जनसि आयता ए ते पलियोवदिसंति पि पवियलिसंति पि
१४. लजूका पि बहुकेसु पानसतसहसेसु आयता ते पि मे आनपिता हेवं च हेवं च पलियोवदाथ जनं धंमयुतं
१५. देवानंपिये पियदसि हेवं आहा
१६. एतमेव मे अनुवेखमाने धंमथंभानि कटानि धंममहामाता कटा धंम..... कटे

४. ऐसे ही मैं सभी वर्गों का ध्यान रखता हूं।
५. सभी संप्रदाय भी विविध प्रकार की पूजा से मेरे द्वारा पूजित हैं।
६. किंतु यह जो (लोगों तक) स्वयं पहुँचना है वह मेरे मत में मुख्य बात है।
७. अभिषेक के २६ वर्ष हो चुकने पर मेरे द्वारा यह धर्मलिपि लिखवायी गयी है।

स्तंभ देहली-टोपरा : सप्तम अभिलेख

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं –
२. जो अतीत काल में राजा हुए वे भी ऐसा चाहते थे कि कैसे लोग धर्म में पुष्ट हों किंतु लोग तदनुरूप धर्म में पुष्ट नहीं हुए।
३. इस बारे में देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं –
४. मेरे मन में यह विचार आया –
५. अतीत काल में राजाओं ने ऐसी चाहना की थी कि लोग कैसे समान रूप से धर्म में पुष्ट हों किंतु लोग तदनुरूप धर्म में पुष्ट नहीं हुए।
६. तो किस प्रकार लोग धर्म का अनुसरण करें?
७. किस प्रकार लोग समुचित रूप से धर्म में पुष्ट हों?
८. कैसे उनको धर्म में पुष्ट कर ऊंचा उठाऊं?
९. इस विषय में देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं –
१०. मुझे यह सुझाई दिया –
११. मैं धर्मोपदेश सुनवाऊं (और) धर्माचरण सिखलाऊं।
१२. इसे सुनकर लोग इसका अनुसरण करेंगे, ऊंचा उठेंगे और धर्म में खूब पुष्ट होंगे।
१३. इस प्रयोजन के लिए मेरे द्वारा धर्मोपदेश सुनवाये गये हैं (और) विविध प्रकार के धर्मानुशासन आज्ञप्त किये गये हैं जिससे कि मेरे (राजपुरुष) भी, जो कि बहुत से लोगों के बीच तैनात हैं, इसका प्रचार और प्रसार करेंगे।
१४. रज्जुक भी कितने ही लाखों प्राणियों पर तैनात हैं– उन्हें भी मैंने आदेश दिया हुआ है कि इस-इस प्रकार से धर्मपरायण लोगों को प्रेरित करो।
१५. देवानांप्रिय प्रियदर्शी ऐसा कहते हैं –
१६. इसी को ध्यान में रखते हुए मेरे द्वारा धर्म-स्तंभ लगवाये गये हैं, धर्म-महामात्र नियुक्त किये गये हैं (और) धर्मोपदेश सुनवाये गये हैं।

१७. देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा

१८. मगेसु पि मे निगोहानि लोपापितानि छायोपगानि होसंति पसुमुनिसानं अंबावडिक्या लोपापिता

१९. अढकोसिक्यानि पि मे उदुपानानि खानापापितानि निंसिढया च कालापिता

२०. आपानानि मे बहुकानि तत तत कालापितानि पटीभोगाये पसुमुनिसानं

२१. ल.... एस पटीभोगे नाम

२२. विविधाया हि सुखायनाया पुलिमेहि पि लाजीहि ममया च सुखयिते लोके

२३. इमं चु धंमानुपटीपती अनुपटीपजंतु ति एतदथा मे एस कटे

२४. देवानंपिये पियदसि हेवं आहा

२५. धंममहामाता पि मे ते बहुविधेसु अठेसु आनुगहिकेसु वियापटासे पवजीतानं चेव गिहिथानं च सव... डेसु पि च वियापटासे

२६. संघठसि पि मे कटे इमे वियापटा होहंति ति हेमेव बाभनेसु आजीविकेसु पि मे कटे इमे वियापटा होहंति ति निगंठेसु पि मे कटें इमे वियापटा होहंति नानापासंडेसु पि मे कटे इमे वियापटा होहंति ति पटिविसिठं पटीविसिठं तेसु तेसु ते.... माता

२७. धंममहामाता चु मे एतेसु चेव वियापटा सवेसु च अंनेसु पासंडेसु

२८. देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा

२९. एते च अंने च बहुका मुखा दानविसगसि वियापटासे मम चेव देविनं च सवसि च मे ओलोधनसि ते बहुविधेन आकालेन तानि तानि तुठायतनानि पटी..... हिद चेव दिसासु च

३०. दालकानं पि च मे कटे अंनानं च देविकुमालानं इमे दानविसगेसु वियापटा होहंति ति धंमापदानठाये धंमानुपटिपतिये

१७. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं-

१८. मार्गों पर भी मेरे द्वारा वट-वृक्ष लगवाये गये हैं जिससे वे पशुओं और मनुष्यों को छाया दे सकें (और) आम के बागीचे (भी) लगवाये गये हैं।

१९. आधे-आधे कोस पर मेरे द्वारा कुएं खुदवाये गये हैं (और) विश्राम-स्थल बनवाये गये हैं।

२०. पशुओं और मनुष्यों के उपभोग के लिए मेरे द्वारा जहां-तहां बहुत से प्याऊ बनवाये गये हैं।

२१. (परंतु) यह तथाकथित 'उपभोग' तुच्छ हैं।

२२. क्योंकि (मेरे) पूर्ववर्ती राजाओं ने और मैंने भी विविध प्रकार से (सांसारिक) सुख पहुँचाने वाले कार्यों से लोगों को सुखी बनाया था।

२३. इस धर्माचरण का लोग अनुसरण करें- इस प्रयोजन से यह (कार्य) मैंने (ही) किया है।

२४. देवानांप्रिय प्रियदर्शी ऐसा कहते हैं-

२५. मेरे वे धर्ममहामात्र भी गृह-त्यागियों तथा गृहस्थों के अनेक प्रकार के कल्याणकारी कार्यों में लगे हुए हैं और सब संप्रदायों में भी व्याप्त हैं।

२६. मेरे द्वारा (ऐसी) व्यवस्था की गयी है कि ये संघ के कार्यों के लिए भी व्यापृत रहेंगे; इसी प्रकार मेरे द्वारा व्यवस्था की गयी है कि ये ब्राह्मणों तथा आजीवकों में भी व्यापृत रहेंगे; मेरे द्वारा व्यवस्था की गयी है कि ये निर्ग्रंथों में भी व्यापृत रहेंगे; मेरे द्वारा व्यवस्था की गयी है कि ये विभिन्न संप्रदायों में भी व्यापृत रहेंगे- (इस प्रकार) प्रत्येक प्रकार की विशेषता के अनुसार उन-उन (वर्गों) में वे महामात्र (व्यापृत रहेंगे)।

२७. और मेरे धर्ममहामात्र इनमें तथा अन्य सब संप्रदायों में व्यापृत हैं।

२८. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं-

२९. ये तथा अन्य बहुत से मुख्य (अधिकारी) मेरा तथा रानियों का दान बांटने में लगे रहते हैं और यहां तथा प्रांतों में, मेरे समूचे रनिवास में अनेक विधियों से भिन्न-भिन्न प्रकार के तुष्टि प्रदान करने वाले कार्य करते रहते हैं।

३०. और मेरे द्वारा व्यवस्था की गयी है कि वे धर्म-संबंधी उत्तम कार्यों (की बढ़ोतरी) के लिए और धर्माचरण के लिए (मेरे) लड़कों और अन्य रानियों के लड़कों का दान बांटने में भी लगे रहें।

३१. एस हि धंमापदाने धंमपटीपति च या इयं दया दाने सचे सोचवे मदवे साधवे च लोकस हेवं वढिसति ति

३२. देवानंपिये प.....स लाजा हेवं आहा

३३. यानि हि कानिचि ममिया साधवानि कटानि तं लोके अनूपटीपंने तं च अनुविधियंति

३४. तेन वढिता च वढिसंति च मातापितिसु सुसुसाया गुलुसु सुसुसाया वयोमहालकानं अनुपटीपतिया बाभनसमनेसु कपनवलाकेसु आव दासभटकेसु संपटीपतिया

३५. देवानंपिय.... यदसि लाजा हेवं आहा

३६. मुनिसानं चु या इयं धंमवढि वढिता दुवेहि येव आकालेहि धंमनियमेन च निझतिया च

३७. तत चु लहु से धंमनियमे निझतिया व भुये

३८. धंमनियमे चु खो एस ये मे इयं कटे इमानि च इमानि जातानि अवधियानि

३९. अंनानि पि चु बहुक.... धंमनियमानि यानि मे कटानि

४०. निझतिया व चु भुये मुनिसानं धंमवढि वढिता अविहिंसाये भुतानं अनालंभाये पानानं

४१. से एताये अथाये इयं कटे पुतापपोतिके चंदमसुलियिके होतु ति तथा च अनुपटीपजंतु ति

४२. हेवं हि अनुपटीपजंतं हिदतपालते आलधे होति

४३. सतविसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिबि लिखापापिता ति

४४. एतं देवानंपिये आहा

४५. इयं धंमलिबि अत अथि सिलाथंभानि वा सिलाफलकानि वा तत कटविया एन एस चिलठितिके सिया

३१. क्योंकि धर्म-संबंधी उत्तम कार्य और धर्माचरण यह है जो ये दया, दान, सत्य, पवित्रता, मृदुता और साधुता इस विधि से लोगों में बढ़ेंगे।

३२. देवानांप्रिय (प्रियदर्शी) राजा ऐसा कहते हैं –

३३. मेरे द्वारा जो कोई भले काम किये गये हैं लोगों ने उनका अनुसरण किया है और (आगे भी) करते रहेंगे।

३४. इससे (उनकी) बढ़ोतरी हुई है और माता-पिता की सेवा, गुरुजनों की सेवा, वयोवृद्धों के अनुसरण, ब्राह्मणों, श्रमणों, दीन-हीनों – यहां तक कि दासों और भृत्यों – के प्रति सम्यक व्यवहार से (और) बढ़ोतरी होगी।

३५. देवानांप्रिय (प्रि)यदर्शी राजा ऐसा कहते हैं –

३६. मनुष्यों में जो यह धर्म की बढ़ोतरी हुई है वह दो प्रकार से हुई है – धर्म के नियमों से और (विपश्यना) ध्यान करने से।

३७. और इनमें भी धर्म के नियमों से कम और (विपश्यना) ध्यान करने से कहीं अधिक (हुई है।)

३८. धर्म के नियम तो यह हैं जो मैंने यह (विधान) किया कि अमुक-अमुक प्राणी अवध्य हैं।

३९. और दूसरे भी अनेकानेक धर्म के नियम हैं जिनका मैंने (विधान) किया है।

४०. परंतु (विपश्यना) ध्यान करने से मनुष्यों की धर्म में खूब बढ़ोतरी हुई है (क्योंकि) इससे जीवों की अ-विहिंसा और प्राणियों का अ-वध होता है।

४१. तो इस उद्देश्य से यह किया गया है जिससे कि यह (मेरे) बेटों-पोतों (के शासनकाल) तक (और) चंद्रमा वा सूर्य (के भासमान रहने) तक टिकने वाली हो और (लोग) इसका अनुसरण करें।

४२. क्योंकि इस प्रकार अनुसरण करने वाले को इहलोक तथा परलोक (का सुख) प्राप्त होता है।

४३. मेरे अभिषेक के २७ वर्ष हो चुकने पर मेरे द्वारा यह धर्मलिपि लिखवायी गयी है।

४४. इस बारे में देवानांप्रिय कहते हैं –

४५. यह धर्मलिपि जहां शिला-स्तंभ अथवा शिला-फलक हों वहां लिखवायी जानी चाहिए जिससे कि यह चिर-स्थायी हो।

खंड (५)

गुहा पर उत्कीर्ण अभिलेख

मूल अभिलेख

गुहा : बराबर

प्रथम मूल अभिलेख

लाजिना पियदसिना दुवाडसवसाभिसितेना
इयं निगोहकुभा दिना आजीविकेहि

द्वितीय मूल अभिलेख

लाजिना पियदसिना दुवाडसवसाभिसितेना इयं
कुभा खलतिकपवतसि
दिना आजीविकेहि

तृतीय मूल अभिलेख

लाज पियदसी एकुनवी-
सतिवसाभिसिते जलघो-
सागमथात मे इयं कुभा
सुपिये ख..... दिना

हिंदी रूपांतर

गुहा : बराबर

प्रथम अभिलेख

अभिषेक के बारह वर्ष हो चुकने पर राजा प्रियदर्शी द्वारा यह न्यग्रोध-गुहा आजीविकों को दी गयी।

द्वितीय अभिलेख

अभिषेक के बारह वर्ष हो चुकने पर राजा प्रियदर्शी द्वारा खलतिक पर्वत पर यह गुफा आजीविकों को दी गयी।

तृतीय अभिलेख

राजा प्रियदर्शी के अभिषेक के उन्नीस वर्ष हो चुकने पर अतीव मनोहारी ख(लतिक पर्वत पर) यह गुफा वर्षा (से बचाव) के लिए दी गयी।

शब्द-विवेचन

स्पष्टीकरण

शब्दों के विवेचन का क्रम प्रायःकर निम्न प्रकार से रखा गया है –

१. अभिलेख में प्रयुक्त हुए शब्द-विशेष

२. उनका हिंदी में अर्थ

३. इन शब्दों का सँस्कृत स्वरूप

४. सँस्कृत पदों का विश्लेषण (यथासंभव शब्दकोषों की सहायता से)

५. पालि शब्द अपने सामान्य रूप में (कोष्ठक में तत्सम सँस्कृत शब्द सहित)

उदाहरण -

गिरनार शिला : प्रथम अभिलेख

(पृष्ठ ६९–७०)

१. समाजो

२. समाज (अर्थात इंद्रियलोलुपता को बढ़ाने वाले जमघट अथवा उत्सव)

३. समाजः (संवीयते अत्रेति)।

४. 'पशुभिन्नानां सङ्घः' (हलायुध०)। 'समजस्तु पशूनां स्यात् समाजस्त्वन्यदेहिनाम्' (अभिधान० ३.४८१)। समाजः- 'पशुभिन्नानां समूहे, सभायाम्, हस्तिनि च' (शब्द०)।

५. समज्ज समज्जा। [सँ.- ✓अज् (हांकना)]

[नोट - संदर्भ-ग्रंथों के लिए कृपया देखें **संदर्भ-सूची** पृष्ठ सं (ix) पर]

शिला अभिलेख - शब्द-विवेचन

गिरनार शिला : प्रथम अभिलेख

• इयं = यह।

• धंमलिपी = धर्म से संसिक्त अक्षररचना (अथवा अक्षरसंस्थान)। सँ.- धर्मलिपी। 'धर्मः' –ध्रियते लोकोऽनेन, धरति लोकं वा। 'लिपी', 'लिपिः' – ✓लिप् से। इनके अन्य रूप 'लिबी', 'लिबिः' भी देखने को मिलते हैं। 'अक्षरन्यासे लिपिर्लिबिः' (अभिधान० ४८४)।

• देवानंप्रियेन प्रियदसिना राजा = देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा। 'देवानांप्रिय' –मौर्य राजाओं की उपाधि। 'प्रियदर्शी' –राजा अशोक का विशेषण। 'देवः' –दीपनात्, द्योतनात्, दानात् (नि० ७.१५)। 'प्रियः' –प्रीणातीति। मनोरम, मञ्जुल, हृद्य। 'राजा' –राजतेः (नि० २.३)। Lat. 'Rex' (a king)

• लेखापिता = लिखवायी गयी।

• इध = यहां (अर्थात, मेरे साम्राज्य में)। सँ. –'इह'। पालि –'इध'। (हिंदी का 'इधर' शब्द इसी से निष्पन्न हुआ प्रतीत होता है।)

• किंचि = कोई। सँ.– किञ्चित्।

• जीवं = प्राणी को। सँ.– जीवः (जीवतीति 'जीव् प्राणधारणे')। 'जीवः पुरुषपुद्गलौ' (त्रिकाण्ड० ११९)।

• आरभित्पा = मार कर। सँ.– आलभ्य। आलम्भः, आलम्भनं –पकड़ना, स्पर्श करना, चीरना, फाड़ना, यज्ञ में बलिदान के लिए पशु का वध करना, यथा 'अश्वालम्भं, गवालम्भं'। (सँस्कृत०)। ('प्रातर्वै पशूनालभन्ते।' शतपथ० ३.७.२.४)

• प्रजूहितव्यं = होम किया जाय। (प्र - ✓हु से)।

• च = और। सँ.– च। पालि = च। 'च पादपूरणे पक्षान्तरे हेतौ विनिश्चये' (त्रिकाण्ड० १०१८)

• समाजो = समाज (अर्थात, इंद्रियलोलुपता बढ़ाने वाले जमघट अथवा उत्सव)। सँ.– समाजः (संवीयतेऽत्रेति)। 'पशुभिन्नानां सङ्घः' (हलायुध०)। 'समजस्तु पशूनां स्यात् समाजस्त्वन्यदेहिनाम्' (अभिधान० ३.४८१)।

समाजः-'पशुभिन्नानां समूहे, सभायाम्, हस्तिनि च।' (शब्द०)। पालि-समज्ज, समज्जा। [सँ.- ✓अज् (हांकना)।]

- कतव्यो = किया जाना चाहिए। सँ.- कर्तव्यः। पालि-कत्तब्बो।
- बहुकं = बहुत। ('बहु' से)। सँ.- बहु (बंहते इति)। 'प्रभूतं प्रचुरं प्राज्यमदभ्रं बहुलं बहु' (अमर० ३.१०८०)।
- हि = क्योंकि। (वाक्य के आरंभ में इसका प्रयोग वर्जित है।) 'हि हेतावववधारणे' (अमर० ३.१४३१)।
- दोसं = दोष। सँ.- दोषः (दूष्यते इति दूषणम् अथवा दुष्यत्यनेनेति पापम्)। 'दोष आदीनवो मतः' (हारा०-१९८)। 'दोषः दूषणे पापे च' (शब्द०)।
- समाजम्हि = समाज में।
- पसति = देखता है। सँ.- पश्यति। पालि-पस्सति।
- अस्ति = (इस प्रकरण में) 'हैं', (अन्यथा 'है')।
- पि = भी। सँ.- अपि। पालि-पि।
- एकचा = कोई-कोई। पालि-एकच्चे।
- साधुमता = अनिंद्य माने गये। सँ.- साधु (साध्नोति परकार्यमिति) 'साध्वनिन्दितः' (त्रिकाण्ड० ५२०)। 'मतं तु संमतेऽर्चिते' (अनेकार्थ० २.१९८)।
- पुरा = पूर्व काल में। सँ.- पुरा (पुरति अग्रे गच्छतीति)।
- महानसम्हि = पाकशाला में। सँ.- महानसम् (महच्च तदनश्चेति) 'महदनः। पाकस्थाने।' (शब्द०) (महत्-मह्यते पूज्यतेऽसाविति)। (महान मंहनीयो भवति-नि० ३.१३)। 'सूदशाला रसवती पाकस्थानं महानसम्' (अभिधान० ९९८)।
- अनुदिवसं = प्रतिदिन। सँ.- दिवसः (दीव्यन्त्यत्रेति)।
- वहूनि = वहुत से। सँ.- वहु (प्रभवतीति सतः-नि० ३.१३)। 'प्रभूतं प्रचुरं प्राज्यमदभ्रं वहुलं वहु' (अमर० 3.१०८०)।
- प्राणसतसहस्रानि = सैकड़ों-हजारों प्राणी। सँ.- शतं (शतं दशदशतः-नि० ३.१०)। सँ.- सहस्रं (सहस्रं सहस्यत्-नि० ३.१०)। 'प्राणास्तु जीविते' (अनेकार्थ० २.१६२)। 'दशशतसङ्ख्यायां, वहुसङ्ख्यायां, तत्सङ्ख्यान्विते च' (शब्द०)

- आरभिसु = मारे जाते थे। (आ-✓लभ् से लुङ् लकार में। कर्मवाच्य, प्रथम पुरुष, बहुवचन)।
- सूपाथाय = सूप के लिए। सँ.- सूपः (सुखेन पीयते)।
- से = परंतु। सँ.- तद्।
- अज = अब। सँ.- अद्य। (अस्मिन्नहनि इदंशब्दस्य निपातः सप्तम्यर्थे) (शब्द०)। पालि- अज्ज।
- ती = तीन। सँ.- त्रि।
- पाणा = प्राणी।
- आरभरे = मारे जाते हैं।
- द्वो = दो। सँ.- द्वि।
- मोरा = मोर। सँ.- मयूरः (मयुरिव रौति शब्दायते इति। यद्वा मिनाति हन्ति सर्पानिति।) 'लघुमांसो मयूरस्तु' (त्रिकाण्ड० २.२८७)।
- एको = एक। सँ.- एक (एक इता सङ्ख्या-नि० ३.१०)। Persian yak.
- मगो = मृग। सँ.- मृगः (मार्ष्ट्यैगतिकर्मणः-नि० १.२०)। (मृगयते अन्वेषयति तृणादिकम्। यद्वा मृग्यते अन्विष्यतेऽसौ व्याधैः)। मृगः कुरङ्गः सारङ्गो वातायुहरिणावपि (अभिधान० ४.१२९३)। 'पशु'-मात्र को भी 'मृग' कहते हैं, देखिए अमर० 3.११९३)-'पशवोऽपि मृगाः' (३.११९३)।
- ध्रुवो = निश्चित। सँ.- ध्रुव (ध्रु गतिस्थैर्ये। यद्वा ध्रुवति स्थिरीभवतीति।) 'ध्रुवो निश्चितनित्ययोः' (शब्दरत्न० III.२०)।
- पछा = पीछे, उत्तर काल में। वैदिक रूप-पश्चा, पश्चात्। 'पश्चात्प्रतीच्यां चरमे' (अनेकार्थ० १७९२)। पालि-पच्छा।
- आरभिसरे = मारे जायेंगे।

गिरनार शिला : द्वितीय अभिलेख

- सर्वत = सर्वत्र। सब स्थानों पर।
- विजितम्हि = राज्य में।
- एवमपि = इसी प्रकार।
- प्रचंतेसु = सीमा से सटे हुए पड़ोसी राज्यों में। सँ.- प्रत्यन्तेषु। 'प्रत्यन्तो म्लेच्छदेशः' (अमर० २८७)। म्लेच्छदेशे।

• पाडा = पाण्ड्यों का राज्य। चोल-देश के दक्षिण-पश्चिम में स्थित। वर्तमान में 'तिन्नेवेल्ली' नाम से प्रसिद्ध। मलय पर्वत तथा ताम्रपर्णी नदी इसकी स्थिति को स्पष्ट करते हैं। [व्युत्पत्ति -पण्डोरपत्यं पाण्ड्यः, राजा देशश्च।]

• सतियपुतो = सत्यपुत्र। अभी तक इसकी पहचान निर्णायक तौर पर नहीं हो पायी है। संभवतः उत्तरी मालाबार में स्थित प्रदेश।

• केतलपुतो = केरलपुत्र। पश्चिमी घाट और समुद्र के बीच कावेरी नदी के उत्तर का भू-भाग केरल कहलाता था। संभवतः दक्षिणी मालाबार का प्रदेश। 'ओड्राः केरलपर्यायाः'। (अभिधान० ४.९६१)।

• आ तंबपर्णी = ताम्रपर्णी (श्रीलङ्का) तक। (शब्द०)।

• अंतियको = अन्तियोक (नाम का राजा)। पूरा नाम Antiochos II Theos, सीरिया -नरेश (२६१-२४६ ईसा-पूर्व)।

• योनराजा = यवन राजा। यहां 'यवन' से अभिप्राय 'यूनानी' (Ionian) से है।

• सामीपं = समीपवर्ती। (शाब्दिक अर्थ -सामीप्य, पड़ोस)। सँ.- सामीप्य (समीपे भवम्)। 'सामीप्यं' -समीपस्य भावः। 'नैकट्यं निकटे च' (शब्द०)।

• द्वे चिकीछ कता = दो (प्रकार की) चिकित्सा (-व्यवस्थाएं) की हुई है। सँ.- द्वे चिकित्से कृते। 'चिकित्सा रुक्प्रतिक्रिया' (अभिधान० -४७३)।

• मनुसचिकीठा = मनुष्य-हित चिकित्सा। सँ.- मनुष्यः (मनोरपत्यमिति)। 'मनुष्या मानुषा मर्त्या मनुजा मानवा नराः। स्युः पुमांसः पञ्चजनाः पुरुषः पूरुषा नरः॥' (अमर० २.५४०)। पालि- मनुस्सो।

• पसुचिकीठा = पशु-हित चिकित्सा। सँ.- पशुः (अवशंपेण सर्वं पश्यतीति)। 'पशुश्चागे मृगादिषु प्रसंङ्गेऽपि च'। (अनेकार्थ० २.५५४)। पालि -पसु। Lat. -pecus (animal).

• ओसुढानि = ओषधियां। रोगनाशक जड़ी-बूटियां। सँ.- औषधम् (ओषधीरिदम्। ओषधिरेव वा।) (ओषधिः -ओषो दाहो दोषिर्वा धीयतेऽत्र)। ओषधीः दोषं धयन्तीति वा - नि० १.२७)। 'ओषध्यः फलपाकान्ता बहुपुष्पफलोपगाः' (मनु० १.४६)। [जो पेड़-पौधे फल पकने के बाद नष्ट हो जाते हैं उन्हें 'ओषधि' कहा जाता है। इन पर खूब फेल-फूल लगते हैं।] पालि -ओसधं। ओसधी।

• मनुसोपगानि = मनुष्यों के लिए उपयोगी। सं.- मनुष्योपगानि। ('उपग' का प्रयोग समास के अंत में ही होता है।)

• पसोपगानि = पशुओं के लिए उपयोगी। सँ.- पशूपगानि।

• जत जत = जहां जहां। सँ.- यत्र यत्र।

• सर्वत्र = सब स्थानों पर। सँ.- सर्वत्र।

• हरापितानि = मंगवायी गयी हैं। सँ.- हारितानि।

• रोपितानि = रुपवा दी गयी हैं। सँ.- रोपितानि। 'रोपित - वृक्षादेर्जनकाय कृताङ्गसंरोपणे।' (शब्द०)।

• मूलानि = कंद। सँ.- मूलम् (मवते बध्नाति वृक्षादिकमिति) (यद्वा ✓मूल् 'रोहणे' से क्युन्प्रत्य)। 'भक्ष्यं भोज्यं च विविधं मूलानि च फलानि च' (मनु० ३.२३०)। 'मूलानि' के उदाहरण -मूली, जमीकंद)।

• फलानि = फल। सं.- फलम् (फलतीति। ✓फल् निष्पत्ती, फला विशरणे वा)। पालि -फलं। [विनयपिटक Pts I.२०१ में सात प्रकार के रोगनाशक फलों का वर्णन किया गया है -बिल्वं, पिप्पलं, मरिचं, हरीतक, विभीतक, आमलक तथा गोठाफल।]

• पंथेसु = मार्गों पर। सँ.- पन्थाः। पालि -पन्थो।

• कूपा = कुंवे। सँ.- कूपः (कु ईषत् आपो यत्र। यद्वा कुवन्ति मण्डूकाः अत्र)। 'भूमौ खानोऽल्पविस्तारो गम्भीरो मण्डलाकृतिः। वर्द्धोऽवद्धः स कूपः स्यादम्भः कोपमुच्यते' (भाव०)। 'कूपः स्यादुदपानः' (अभिधान० ४.१०९१) (कूपः कस्मात्। कुपानं भवति, कुप्यतेर्वा -नि० ३.१९)। पालि -कूप। Lat. -cupa.

• खानापिता = खुदवाये गये हैं। सँ.- खानिताः।

• रुखा = वृक्ष। सँ.- वृक्षः (वृक्षो व्रश्चनात् -नि० २.६)। पालि - रुक्खो।

• परिभोगाय = नितांत उपभोग के लिए। [परिपूर्णता जतलाने के लिए 'परि' का प्रयोग अनेक यूरोपीय वा अन्य भाषाओं में भी किसी-न-किसी रूप में पाया जाता है।]

गिरनार शिला : तृतीय अभिलेख

• आह = कहता है। सँ.- आह। पालि -आह।

• द्वादसवसाभिसितेन = अभिषेक के बारह वर्ष हो चुकने पर। सँ.- द्वादशवर्षाभिषिक्तेन। 'द्वादश -द्वौ च दश च द्व्यधिका वा दश।' (शब्द०)। 'वर्षं हायनोऽब्दं समाः शरत्' (अभिधान० २.१५९)। 'अभिषिक्त -अभिषेक किया हुआ। राजतिलक किया हुआ, राजसिंहासन पर बैठा हुआ।' (सँस्कृत०)। सँ.- अभिषिक्तः। पालि - अभिसित्तो।

• आञपितं = आज्ञा जारी की गयी है। सँ.- आज्ञापितम्।

• युता च राजूके च प्रादेसिके च = युक्त, रज्जुक और प्रादेशिक (संज्ञा के अधिकारीगण)। सँ.- युक्ताः च रज्जुकाः च प्रादेशिकाः च।

• पंचसु पंचसु वासेसु = हर पांच वर्षों में।

• अनुसंयानं नियातु = (अपने अपने क्षेत्राधिकार में) सम्यक प्रकार से दौरा करने के लिए नियमपूर्वक जावें। (यहां 'नियातु' का तात्पर्य 'नियान्तु' से है)। संयानं-[सम्-√या से निष्पन्न] सहगमन, साथ जाना, यात्रा, मुर्दे को ले जाना, सांचा, गाड़ी)। (सँस्कृत०)

• एतायेव अथाय = इसी प्रयोजन के लिए। सँ.- एतस्मै एव अर्थाय। 'अर्थः-विषये, अभिधेये, धने, वस्तुनि, प्रयोजने, निवृत्तौ, हेतौ, प्रकारे, अभिलाषे, उद्देश्ये च।' (शब्द०)

• इमाय धंमानुसस्टिय = इस धर्मानुशासन के लिए। सँ.- अस्मै धर्मानुशिष्ट्यै। (सँ.- अनुशिष्टिः)। अनुशिष्टिः-आदेश। शिक्षण। आज्ञा। विचारपूर्वक कर्तव्याकर्तव्य का निरूपण। (सँस्कृत०)। पालि- अनुसिट्ठि।

• अञाय पि कंमाय = अन्य कार्य के लिए भी। सँ.- अन्यस्मै अपि कर्मणे (अन्यो नानेयो भवति-नि० १.६) (कर्म कस्मात्, क्रियत इति सतः-नि० ३.१)। पालि-अञ्ञो। कम्मं।

• सुसूसा = आराधना। कहना मानना। सँ.- शुश्रूषा 'शुश्रूषाराधनोपास्तिवरिवस्यापरीष्टयः' (अभिधान० ३.४९७)। 'शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा' (अभिधान० २.३१०)। पालि- सुस्सूसा।

• मित्रसंस्तुतञातीनं बाम्हणसमणानं = मित्रों, परिचितों, संबंधियों और ब्राह्मणों तथा श्रमणों को। सँ.- मित्रम् (मेद्यति स्निह्यति इति)। 'मित्रं-मिद्यति स्निह्यति' (शब्द०)। 'संस्तुत- परिचिते, सम्यक्स्तुते च। (शब्द०)। 'ज्ञातिः पितृसगोत्रयोः' (अनेकार्थ० २.१८३) 'सगोत्रबान्धवज्ञातिबन्धुस्वस्वजनाः समाः।' (अमर० २.५७३)। 'ज्ञातेः स्वसृदुहित्रात्मजाग्रजावरजादयः' (अभिधान० १.९)। 'ब्राह्मणो विप्रे' (अनेकार्थ० ३.८२३)। संस्तुतः = परिचितः। ज्ञातिः (संज्ञानात्-नि० ४.२१)। ब्राह्मणः (ब्रह्म वेदं शुद्धं चैतन्यं वा वेत्त्यधीते वा इति)। श्रमणः (श्राम्यति तपस्यतीति)।

• अनारंभो = हिंसा न करना। सँ.- अनारम्भः। पालि- अनारम्भो।

• अपव्ययता = कम व्यय करना। सँ.- अल्पव्ययता। (सँ.- अल्प-, पालि-अप्प-)। 'व्ययः धनादेस्त्यागे' (शब्द०)।

• अपभाडता = कम संचय करना। सँ.- अल्पभाण्डता।

• परिसा = परिषद्। सँ.- परिषत्। पालि-परिसा।

• युते = युक्तों को। सँ.- युक्तान्।

• आञपयिसति = आज्ञा देगी। सँ.- आज्ञापयिष्यति।

• गणनायं = व्यौरा रखने के लिए।

• हेतुतो च व्यंजनतो च = संक्षेप में और विस्तार के साथ। 'हेतुर्बीजम्' (अभिधान० ६.१५१३)। 'व्यञ्जयन्ति प्रकटान् कुर्वन्त्यर्थानिति व्यञ्जनानि' (उवट)।

गिरनार शिला : चतुर्थ अभिलेख

• अतिकातं = व्यतीत हो गया है। सँ.- अतिक्रान्तम्। 'अति प्रकर्षे लङ्घने भृशे। स्तुतावसंप्रतिक्षेपेऽपि। (अनेकार्थ० १७८८)। 'अति- उत्कर्षे, अतिक्रमणे, अतिशये च' (शब्द०)। पालि- अतिक्कन्तं।

• वढितो = बढ़ा है। सँ.- वर्द्धितः। 'वर्द्धितं छिन्नपूर्णयोः' (अनेकार्थ० ३.८८९)। पालि-वड्ढितो।

• ञातीसु = संबंधियों के प्रति। सँ.- ज्ञातिषु (ज्ञातिः-जानाति छिद्रं कुलस्थितिञ्च)। (पालि-ञाति)।

• असंप्रतिपती = असंप्रतीपती = अनादर का भाव। सँ.- असंप्रतिपत्तिः। (सम्प्रतिपत्तिः-समं + प्रतिपद्यते। वाद्युक्तार्थविषयस्वीकरणे 'श्रुत्वाभियोगं प्रत्यर्थी यदि तं प्रतिपद्यते सा तु सम्प्रतिपत्तिः स्यात्' (शब्द०)।

• ब्राम्हणसमणानं = ब्राह्मणों और श्रमणों के। (सँ. - ब्राह्मणश्रमणानाम्)। ['ब्राह्मण' और 'श्रमण'-किनसे आशय? बाहितपापोति ब्राह्मणो समचरिया समणोति वुच्चति, अर्थात ब्राह्मण वह कहलाता है जिसने पापों को बहा दिया हो और श्रमण वह जिसकी चर्या समतापूर्ण हो।]

• धंमचरणेन = धर्माचरण से। सँ.- धर्माचरणेन।

• भेरीघोसो = भेरी का नाद। सँ.- भेरि(री) घोषः (भेरिः, री-बिभ्यति शत्रवोऽस्या इति। दुन्दुभिः।) 'भेरीपटहमानकौ' (अमर० ३.११७६)। (घोषः-घोषन्ति शब्दायन्ते गावो यस्मिन्। ध्वनिः।)। (घोषो घुष्यतेः-नि० ९.९)। पालि-भेरिघोसो।

• अहो = हो गया है। सँ.- अभूत् (लुङ् लकार)।

• विमानदर्सणा = देवयान दिखलाने से। सँ.- **विमानदर्शनात्**। (विमानं- विगतं मानमुपमा यस्य। देवयानम्।)

• हस्तिदसणा = हाथी दिखलाने से। सँ.- **हस्तिदर्शनात्**। पालि -हत्थी-दस्सनं।

• अगिखंधानि = आग की मशालों को। सँ.- **अग्निस्कन्धान्**। 'स्कन्धाग्निः स्थूलकाष्ठाग्निस्तृणाग्निस्तु भवेत्समः' (हारा० २०१)। 'स्कन्धः -स्कन्धते आरुह्यतेऽसौ। अंसे, वृक्षस्य काण्डे, नृपे, व्यूहे, युद्धे, समूहे, इत्यादि' (शब्द०)। (अग्निः- अङ्गति ऊर्ध्वं गच्छतीति)। (स्कन्धः- स्कन्धते आरुह्यतेऽसौ सुखेन शाखया वा)। पालि- अग्गिक्खन्धो।

• रूपानि = दृश्य। सँ.- रूपाणि। (रूपं रोचतेः -नि० २.३)। पालि -रूपं।

• दसयित्पा = दिखला कर। सँ.- दर्शयित्वा।

• जनं = लोगों को। सँ.- जनम्। (जनः -जायते इति। लोकः।) 'जनः- जायते अजनिष्ट। जनयति जातः।' (शब्द०)। पालि -जन।

• यारिसे = जैसे। सँ.- यादृशम्। (यादृश, श्, यादृक्ष -यस्येव दर्शनमस्य। यत्सदृशे यथाविधे) (शब्द०)। पालि -यादिस।

• भूतपुवे = पहले हुआ। सँ.- भूतपूर्वम्। पालि -भूतपुब्बो।

• तारिसे = वैसे। सँ.- तादृशम्। पालि -तादिसो।

• अविहीसा = अविहिंसा। सँ.- अविहिंसा। (हिंसा -हिंसनमिति। माणं, घातः।)। पालि -अविहिंसा।

• थेरसुसुसा = बड़े-बूढ़ों की सेवा-शुश्रूषा। सँ.- स्थविरशुश्रूषा। (स्थविरः- तिष्ठति सुचिरमिति। वृद्धः; यातयामः।)। स्थविरः -अचले, स्थिरे, वृद्धे च। (शब्द०)। 'प्रवयाः स्थविरो वृद्धो जीनो जीर्णो जरन्नपि' (अमर० २.५८१)। 'स्थविरश्च सर्वानुशासकः सर्वमान्यो वा चिरन्तनो वा' (उवट)। पालि -थेरो।

• पुत्रा = पुत्र। बेटे। सँ.- पुत्राः। (पुत्रः, पुरु त्रायते। निपरणाद्वा। पुन्नरकं ततस्त्रायत इति वा -नि० २.११)। 'पुंनाम्नो नरकाद्यस्मात्त्रायते पितरं सुतः। तस्मात्पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयंभुवा॥' (मनु० ९.१३८)। पालि -पुत्तो।

• पोत्रा = पोते। सँ.- पौत्राः। (पौत्रः -पुत्रस्यापत्यम्। पुत्रस्य पुत्रे नप्तरि।) 'पुत्रेण लोकाञ्जयति पौत्रेणानन्त्यमश्नुते' (वशिष्ठ०)।

• प्रपोत्रा = पड़पोते। सँ.- प्रपौत्राः। (प्रपौत्रः -प्रगतः कारणतया पौत्रम्। पौत्रस्य पुत्रे।) (शब्द०)।

• प्रवधयिसंति = बढ़ायेंगे। सँ.- प्रवर्धयिष्यन्ति।

• आव सवटकपा = सृष्टि के विनाश तक। सँ.- यावत् संवर्तकल्पम्। 'संवर्तः प्रलयः कल्पः क्षयः कल्पान्त इत्यपि' (अमर० १.१३०)। 'कल्पो युगान्तः कल्पान्तः संहारः प्रलयः क्षयः।' (अभिधान० २.१६१)। कल्पः -ब्रह्मा का एक दिन, अथवा १,००० युग जिसका परिमाण ४,३२०,०००,००० वर्ष होता है जो सृष्टि की अवधि बतलायी जाती है। महाभारत में १,००० युगों के बाद संवर्तक अग्नि के प्रकट होने का उल्लेख किया गया है। पालि -संवट्टो (संवर्तः)। कप्पो (कल्पः)।

• तिस्टंतो = प्रतिष्ठित हुए हुए। सँ.- तिष्ठन्तः।

• अनुसासिसंति = (कैसे जीवन में उतारा जाय यह) सिखायेंगे। सँ.- अनु-शासिष्यन्ति। [अनु- ✓शास् = to teach, instruct (how to act) - V.S. Apte's 'The Practical Sanskrit-English Dictionary']। पालि -अनुसासति (वैदिक-अनुशासति। सँ.- अनुशास्ति।)

• सेस्टे कंमे = श्रेष्ठ कर्म। सँ.- श्रेष्ठं कर्म। (श्रेष्ठम् -अतिशयेन प्रशस्यम्। कर्म -क्रियते तत्)। पालि -सेट्ठकम्मं।

• असीलस = शीलरहित (व्यक्ति) का। सँ.- अशीलस्य। 'शीलं स्वभावे सद्वृत्ते' (अमर० ३.१३७५)। पालि -असीलको। देखिये - 'सीलेन परिहीनस्स, उत्तमत्थो न सिज्झति'।

• वधी = बढ़ोतरी। सँ.- वृद्धिः। 'वृद्धिः समृद्धौ अभ्युदये, सम्मत्तौ, समूहे च' (शब्द०)। पालि -वुद्धि। वड्ढि।

• अहीनी = कमी न होना। सँ.- अहानिः। 'हानिः क्षतौ अपचये' (शब्द०)। पालि -हानि (सँ.- हानिः)।

• युजंतु = लग जायें। सँ.- युञ्जन्तु। पालि -युञ्जति।

• नो = नहीं। सँ.- नो (न + उ)। 'नो अभावे' (शब्द०)। पालि -नो।

• लोचेतव्या = रुचि लें। सँ.- रोचयितव्या।

कालसी शिला : पंचम अभिलेख

• कयाने = भलाई का काम। सँ.- कल्याणम् (कमनीयं भवति -नि० २.३)। 'कल्याणं हेम्नि मङ्गले' (अनेकार्थ० ३.७९३)। पालि - कल्याणं।

• दुकले = कठिन। सँ.- दुष्करम्। (दुःखेन कार्य्यं)। पालि -दुक्करं।

• आदिकले = पहल करने वाला। सँ.- आदिकरः। पालि-आदि (प्रयोग-आदिकम्मं)।

• कलेति = करता है। सँ.- करोति। पालि-करोति।

• ममया = मेरे द्वारा। सँ.- मया। पालि-मया।

• ममा = मेरे। सँ.- मम। पालि-मम।

• नताले = नाती। सँ.- नप्तारः। 'नप्ता पौत्रः पुत्रपुत्रः' (अभिधान० ३.३९९)।

• पलं = परे। आगे। सँ.- परम्। पालि-परं।

• अपतिये = संतान। सँ-अपत्यम्। (न पतति वंशो यस्मात्)। 'अपत्यं न पतन्ति पितरोऽनेन। पुत्रदुहितृरूपे सन्ताने' (शब्द०)।

• आवकपं = कल्पांत तक। सँ.- यावत्कल्पम्।

• अनुवटिसंति = अनुवर्तन करेंगे। सँ.- अनुवर्तिष्यन्ते।

• सुकटं = पुण्य का काम। सँ.- सुकृतम्। 'सुकृतं पुण्ये, धर्मे, शुभे च' (शब्द०)। पालि-सुकतं, सुकटं।

• देसं = थोड़ा। तनिक। सँ.- देशम् (दिश्यते निर्दिश्यते इति)। पालि-देसो।

• हापयिसति = अवहेलना करेगा। सँ.- हापयिष्यति। पालि-हापेति। (सँ.- हापयति)।

• दुकटं = पाप-कर्म। सँ.- दुष्कृतम्। 'दुष्कृतं दुरितं पापमेनः पाप्मा च पातकम्' (अभिधान० ६.१३८०)। पालि-दुक्कटं।

• नामा = वस्तुतः। सँ.- नाम। 'नाम-अव्य० नामयति। स्वीकारे, विस्मये, स्मरणे, सम्भावनायां, निन्दायां, प्राकाश्ये, विकल्पे, अलीके, कोपे च।' (शब्द०)। पालि-नाम।

• सुपदालये = खूब दलन किया जाने योग्य। सँ.- सुप्रदार्यम्। देखिए पालि-'सब्बे कामा पहीना मे, भवा सब्बे पदालिता।' (उत्तरपालत्थेरगाथा-२५८)।

• धंममहामता = धर्ममहामात्र (नाम के अधिकारी)। सँ.- धर्ममहामात्राः। (महामात्रः-महती मात्रा मर्यादा परिमाणं यस्य।) (मात्रा मानात्- नि० ४.२५)। 'महामात्रः समृद्धे चामात्ये हस्तिपकाधिपे' (मेदिनी०)। 'मन्त्रे कर्मणि भूषायाम् वित्ते माने परिच्छदे। मात्रा तु महती येषां महामात्रास्तु ते स्मृताः॥' (शब्द०)।

• तेदस = तेरह। सँ.- त्रयोदश। (त्रयश्च दश च; त्र्यधिका वा दश)। पालि-तेरस, तेलस।

• सवपासंडेसु = सब संप्रदायों में। सँ.- सर्वपाषण्डेषु। 'सर्वं समस्तमन्यूनं समग्रं सकलं समम्' (अभिधान० ६.१४३३)। 'पाषण्डाः सर्वलिङ्गिनः' (अमर० २.७२४)। पालि-पासण्डो (सँ.- पाषण्डः)।

• वियापटा = नियुक्त किये गये हैं। सँ.- व्यापृताः। व्यापृत - व्यापारयुक्ते। (शब्द०)।

• धंमाधिथानाये = धर्म को प्रतिष्ठित करने के लिए। सँ.- धर्माधिष्ठानाय। 'अधिष्ठानं प्रभावेऽध्यासने नगरचक्रयोः' (अनेकार्थ० ४.११०८)। पालि-अधिष्ठान (सँ.- अधिष्ठानं)।

• हिदसुखाये = हित-सुख के लिए। सँ.- हितसुखाय। (सुखं कस्मात्, सुहितं क्षेम्यं [illegible] ३.१३)। 'हितं गते, पथ्ये, इष्टसाधने, मङ्गले च' (शब्द०)। 'सुखं त्रिदिवशर्मणोः' (अनेकार्थ० २.४४)। देखिए पालि-'तेसं तं भविस्सति दीघरत्तं हिताय सुखाय'।

• धमयुतसा = धर्मपरायण (व्यक्ति) के। सँ.- धर्मयुक्तस्य। 'युतोऽन्विते' (अनेकार्थ० २.२०२)।

• योनकंबोजगंधालानं = यवनों, कंबोजों और गंधारों के। (भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर स्थित जातियां)। सँ.- यवनकम्बोजगन्धाराणाम्। (कम्बोजाः कम्बलभोजाः कमनीयभोजा वा। कम्बलः कमनीयो भवति।-नि० २.२)। 'यवन'-पु. देशभेदे, तद्देशस्थे जने ब.व.। (शब्द०)। 'कम्बोजो देशसङ्घयोः' (त्रिकाण्ड० ३.६३५)। 'गन्धारः-गन्धमृच्छति। रागे, सिन्दूरे, स्वरभेदे च। देशभेदे ब.व.। (शब्द०)।

• अपलंता - पश्चिमी सीमा पर रहने वाले लोग। सँ.- अपरान्ताः। (अपरान्तः-अपरस्या अन्तः। पाश्चात्तादेशभेदे। तद्देशवासिनि। (शब्द०)।

• भटमयेसु = भृत्यों और भर्तारों में। सँ.- भृतार्येषु। 'भृतकः वेतनेन कर्म्मकरे' (शब्द०)। ('भटमयेसु' में 'म्' का प्रयोग 'श्रुतिमधुर' के रूप में हुआ है जैसा कि अनेक स्थलों पर पालि-प्राकृत में पाया जाता है।)। 'उत्तमस्त्वायुधीयो यो मध्यमस्तु कृषीवलः। अधमो भारवाही स्यादित्येवं त्रिविधो भृतः॥' (मिताक्षरा)। देखिए पालि-'भतको' (भृतकः) तथा 'अरियो' (आर्यः)।

• बंभनिभेसु = ब्राह्मणों और धनाढ्यों में। सँ.- ब्राह्मणेभ्येषु। 'ब्राह्मणो विप्रे (अनेकार्थ० ३.८२३)। 'इभ्य आढ्यो धनीश्वरः' (अभिधान० ३.३५७)। 'इभ्य- इभं हस्तिनमर्हति यत्। प्रचुरधनवति आढ्ये, नृपे च।' (शब्द०)। [ब्राह्मणः -ब्रह्मणः (विप्रस्य) अपत्यम्, ब्रह्म (वेदम्) अधीते, ब्रह्म (परमात्मानं) जानाति वा।] [इभ्यः -एति गच्छतीति इभः (हस्ती)। इभमर्हति स (धनाढ्यः)।]। पालि -'ब्राह्मणो' तथा 'इब्भो' (इभ्यः) ['इभो'=हस्ती]।

• अनथेसु = अनाथों में। सँ.- अनाथेषु। पालि -अनाथो (अनाथः)।

• वुधेसु = वृद्धों में। सँ.- वृद्धेषु। 'वृद्धः प्राज्ञे स्थविरे च' (अनेकार्थ० २.२६३)। पालि -वुड्ढो, वुद्धो (वृद्धः)।

• अपलिबोधाये = बाधाएं दूर करने के लिए। सँ.- अपरिबाधाय। पालि -पलिबोधो (Childers के अनुसार 'परिरोध' तथा 'परिबाध' से निष्पन्न भ्रमित रूप अथवा किसी बोली में 'परिबाध' का रूप)।

• बंधनवधसा = बंधन में बँधे हुओं (अर्थात, बंदियों) के। सँ.- बन्धनबद्धस्य। 'बन्धनं दाम संदानम्' (अभिधान० ४.१२७४) 'बन्धनं निगडादिना संयमने, वधे च।' (शब्द०)। (बन्धनम् -बध्यतेऽस्मिन् इति कारागारम्।) (बद्धम् -बध्यते स्म इति। बन्धनयुक्तं, निगडितम्)। पालि -बन्धनं।

• पटिविधानाये = (धन से) भरण-पोषण करने के लिए। सँ.- प्रतिविधानाय। 'प्रतिविधानं प्रतीकारे' (शब्द०)।

• मोखाये = रिहाई के लिए। सँ.- मोक्षाय। (मोक्षः -मोक्ष्यते दुःखमनेन। 'मोक्षो निःश्रेयसे वृक्षविशेषे मोचने मृतौ' (अनेकार्थ० २.५७३) पालि -मोक्खो (मोक्षः)।

• एयं अनुबधा = इस हेतु। सँ.- एतम् अनुबन्धम् (=एतदर्थम्)। 'अनुबन्ध प्रकृतस्यानुवर्तने' (शब्द०)।

• पजाव ति = बाल-बच्चों वाला है। सँ.- प्रजावान् इति। (प्रजा-प्रजात इति। सन्ततिः।) 'प्रजा लोके सन्ततौ च' (अनेकार्थ०-२.८७)। पालि -पजा (प्रजा)। ति (इति)।

• कटाभिकाले = जिस पर जादू-टोना किया गया हो। सँ.- कृताभिकारः 'हिंसार्थं कर्माभिचारः स्याद्यज्ञार्थं तु यज्ञियम्।' (अभिधान० ३.८३०)। 'अदृष्टोपायेन परपीडाऽभिचारः' (मिताक्षरा)। 'अभिचारः -हिंसाफलेकेषु मारणोच्चाटनस्तम्भनप्रभृतिषु अथर्ववेदतन्त्रादिप्रसिद्धेषु कर्म्मसु' (शब्द०)।

'अभिचारः -अनुष्ठान। मारण, उच्चाटन, विद्वेषण आदि के लिए अनुष्ठान। (सँस्कृत०)। महालके = वृद्धः। सँ.- महल्लकः। पालि- महल्लको।

• बाहिलेसु नगलेसु सवेसु = बाहर के सब नगरों में। (सँ.- बाह्येषु नगरेषु सर्वेषु।) (नगरम् -नगा इव प्रासादादयः सन्ति यत्र। पूः। पुरी।)। पालि -बाहिरो (बाह्यः)। नगरं (नगरम्)।

• ओलोधनेसु = अंतःपुरों में। सँ.- अवरोधनेषु। 'अन्तःपुरं स्यादवरोधनम्' (अमर० २.३०९)। पालि -ओरोधो (अवरोधः)।

• भातिनं = भाइयों के। सँ.- भ्रात्रीणाम्। (भ्राता भरतेर् हरतिकर्मणो हरते भागम्, भर्त्तव्यो भवतीति वा -नि० ४.२६)। पालि -भाता (भ्राता)।

• भगिनिना = बहिनों के। सँ.- भगिनीनाम्। (भगिनी -भगं कल्याणं यत्नः इच्छा वा, पित्रादितो द्रव्यादाने विद्यतेऽस्या इति। स्वसा।)। पालि -भगिनी।

• धंमनिसिते = धर्मोन्मुख। धर्म के प्रति श्रद्धावान। सँ.- धर्मनिश्रितः। पालि -निस्सितो (निश्रितः)।

• दानसुयुते = (खूब) दान देने वाला। सँ.- दानसंयुक्तः। (दानम् -दीयते इति।) पालि -'दानं' (दानम्)। 'संयुत्तो' तथा 'सञ्जुत्तो' (संयुक्तः)। Lat. -donum.

• चिलथितिक्या = चिरस्थायी। सँ.- चिरस्थितिका। पालि -चिरं (चिरम्)। ठितको (स्थितकः)।

गिरनार शिला : षष्ठ अभिलेख

• अथकंमे = राज्य का आवश्यक कार्य। सँ.- अर्थकर्म। अर्थकर्म = मुख्य कार्य। (सँस्कृत०)।

• पटिवेदना = कार्य की सूचना। सँ.- प्रतिवेदना।

• काले = समय। सँ.- काले। (कालः -कलयति आयुः)। 'स्यात्कालः समयः' (अभिधान० २.१२६)। पालि -कालो (कालः)।

• भुंजमानस = खाना खाते हुए। सँ.- भुञ्जाने। पालि -भुञ्जानं (भुञ्जानम्)।

• गभागारम्हि = शयनकक्ष में। सँ.- गर्भागारे। (अगारं -अगं न गच्छन्तमृच्छति। आगारं -आगमृच्छति।) 'गर्भागारम् -गर्भइवागारम्। गर्भमध्यभागे वासगृहे।' (शब्द०)। पालि -गब्भो (गर्भः)। आगारं (अगारं, आगारम्)।

• वचम्हि = पशुशाला में। सँ.- व्रजे। (व्रजः-व्रजन्ति सङ्घीभूय यान्त्यत्र। गोष्ठम्।)। 'व्रजः समूहे, गोष्ठे, पथि, मथुरासमीपस्थे देशभेदे च' (शब्द०)। 'व्रजन्त्यस्माद् गाव इति व्रजो घोषः गोवाटो वा उच्यते।' (उवट)। 'व्रजोऽध्वगोष्ठसंघेषु' (अनेकार्थ० २.९०)। पालि-वजो (व्रजः)।

• विनीतम्हि = (सधे हुए) घोड़े (की पीठ) पर। सँ.- विनीते। 'विनीतः सुवहाश्वे' (मेदिनी०)। 'विनीतस्तु साधुवाही' (अभिधान०- ४.१२३५)। पालि-विनीते।

• उयानेसु = उद्यानों में। सँ.- उद्यानेषु। (उद्यानम्-उद्याति क्रीडार्थमस्मिन् इति। राज्ञः साधारणं वनम्। आक्रीडः।)। पालि-उय्यानं (उद्यानम्)।

• पटिवेदका = प्रतिवेदक। सूचना देने वाले कर्मचारी। सँ.- प्रतिवेदकाः। पालि-पटिवेदेति (प्रतिवेदयति)।

• स्टिता = रुक कर। सँ.- स्थिताः। पालि-ठिता।

• मुखतो = मुँह से। मौखिक रूप से। सँ.- मुखतः। (मुखम्-खनति विदारयति अन्नादिकमनेनेति। आस्यम्।)। पालि-मुखं (मुखम्)।

• आञपयामि = आज्ञा देता हूं। सँ.- आज्ञापयामि। पालि-आणापेति (आज्ञापयति)।

• स्वयं = अपने आप। सँ.- स्वयम्। पालि-सयं।

• दापकं = दान के संबंध में। सँ.- दापकम्।

• स्रावापकं = घोषणा के संबंध में। सँ.- श्रावकम्।

• आचायिके = कोई आपाती (अत्यावश्यक) कार्य। सँ.- आत्ययिकम्। पालि-अच्चायिको (आत्ययिकः)।

• अरोपितं = सौंपा गया। सँ.- आरोपितम्। पालि-आरोपितो (आरोपितः)।

• विवादो = मतभेद। सँ.- विवादः। (विवादः-विरुद्धोवादः। व्यवहारे कलहे च।) (शब्द०)। पालि-विवादो।

• निझती = स्थगन अथवा संशोधन। सँ.- निध्यप्तिः। (अथवा) अस्वीकृति। सँ.- निक्षप्तिः।

• परिसायं = परिषद में। सँ.- परिषदि। (परिषद्-परितः सीदन्त्यस्यामिति। सभा)। पालि-परिसा (परिषद्)।

• अनंतरं = अविलंब। सँ.- अनन्तरम्। 'अन्तरं रन्ध्रावकाशयोः।' (अनेकार्थ० ३.१११४)। पालि-अनन्तरं।

• तोसो = सन्तोष। सँ.- तोषः। पालि-तोसो।

• उस्टानम्हि = उद्यम में। सँ.- उत्थाने। 'उत्थानं पौरुषे तन्त्रे ...' (अमर० ३.१२९१)। पालि-उट्ठानं, उट्ठहनं (उत्थानम्)।

• अथसंतीरणाय = कार्य-संपादन में। सँ.- अर्थ-संतीरणायाम्। अर्थः-विषये, अभिधेये, धने, वस्तुनि, प्रयोजने, निवृत्तौ, हेतौ, प्रकारे, अभिलाषे, उद्देश्ये च। (शब्द०)। सन्तीरण = ग्रहीत विषय का सम्यक विचार।

• कंमतरं = कोई और बड़ा काम। सँ.- कर्मतरम्।

• पराक्रमामि = पराक्रम करता हूं। सँ.- पराक्रमे। (पराक्रमः-पराक्रम्यतेऽनेनेति। शौर्यम्। उद्योगः।) पालि-परक्कमति (पराक्रमति-ते)।

• आनंणं = ऋण से उऋण होना। सँ.- आनृण्यम्। पालि-आनण्यं।

• नानि = उनको। सँ.- एनानि।

• सुखापयामि = सुखी बनाऊं। सँ.- सुखयामि। पालि-सुखेति (सुखयति)।

• स्वगं = स्वर्ग को। सँ.- स्वर्गम्। (स्वर्गः-स्वरिति गीयते इति। यद्वा सुष्ठु अर्ज्यते इति। देवतानामालयः। नाकः। त्रिदिवः। देवलोकः।) 'स्वर्गः दुःखासम्भिन्ने सुखसन्ताने, देवानामावासस्थाने च।' (शब्द०)। 'मनः प्रीतिकरः स्वर्गो नरकस्तद्विपर्ययः।' (ब्रह्मपु०-अध्याय १९)। पालि- सग्गो (स्वर्गः)।

• आराधयंतु = प्राप्त करें। सँ.- आराधयन्तु। 'आराधनं साधने स्यादवाप्तौ तोषणेऽपि च' (अमर० ३.१२९८)।

• अनुवतरं = अनुवर्तन करें। सँ.- अनुवर्तेरन्।

गिरनार अभिलेख : सप्तम अभिलेख

• वसेयु = रहें। सँ.- वसेयुः।

• सयमं = संयम। सँ.- संयमम्। 'संयमः, संयामः-इन्द्रियनिग्रहे, बन्धने च' (शब्द०)। पालि-'संयमो' तथा 'सञ्ञमो' (संयमः)।

• भावसुधि = चित्त-शुद्धि। सँ.- भावशुद्धिम्। 'भावः पदार्थो धर्मः स्यात्' (त्रिकाण्ड० ३.५४३)। 'भावः-भावयति चिन्तयति पदार्थान्। भावयति ज्ञापयति हृदयगतम्। हृद्गतावस्थावेदके मानसविकारे स्वेदकम्पादौ, व्यभिचारिभावे।' (शब्द०)। और भी, 'बाह्यार्थालम्बनो यस्तु विकारो मानसो

भवेत्। स भावः कथ्यते सद्भिस् तस्योत्कर्षः रसः स्मृतः' (हलायुध० ९०)। पालि-भावो (भावः)। सुद्धि (शुद्धिः)।

• उचावचछंदो = नाना प्रकार की इच्छाओं वाले। सँ.- उच्चावचछन्दः। (उच्चावचः-उदक् च अवाक् च। अनेकप्रकारः।) 'उच्चावचं नैकभेदम्' (अमर० ३.११००)। 'छन्दोऽभिप्राय आकूतं मतभावाशया अपि।' (अभिधान० ६.१३८३)। पालि-उच्चावचो (उच्चावचः)। छन्दो (छन्दः)।

• उचावचरागो = नाना प्रकार की आसक्तियों वाले। सँ.- उच्चावचरागः। 'रागोऽनुरागोऽनुरतिः' (अभिधान० २.२९६)। पालि-रागो (रागः)।

• कासंति = करेंगे। सँ.- करिष्यन्ति।

• कतंञता = कृतज्ञता। सँ.- कृतज्ञता। 'कृतज्ञः-कृतं कृतोपकारं जानाति।' (शब्द०)। पालि-कतञ्ञुता।

• दढभतिता = निश्चल भक्ति। सँ.- दृढभक्तिता। दृढ=प्रगाढ़। 'दृढः शक्ते भृशे स्थूले' (अनेकार्थ० २.१४४)। 'भक्तिः-सेवायाम् आराधनायाम्, तदेकाग्रचित्तवृत्तिभेदे।' (शब्द०)। (भक्तिः-भज्यते इति। अनुरागविशेषः। श्रद्धा।)। पालि-दळ्हो (दृढ)। भत्ति (भक्तिः)।

• निचा = नीच। सँ.- नीचाः। नीच- निकृष्टामीं लक्ष्मीं चमति। पामरे, निम्ने, वामने च। (शब्द०)। 'नीचः पामरखर्वयोः' (अनेकार्थ० २.७३)। (नीचः-निकृष्टतमीं शोभां चिनोती)।

• वाढं = निश्चय ही। सँ.- बाढम्। 'बाढं प्रगाढं भृशकृच्छ्रयोः', (अमर० ३.१२१७)। पालि-वाळ्हं (=exceedingly) [Childers]

गिरनार शिला : अष्टम अभिलेख

• विहारयातां = विहारयात्रा पर। सँ.- विहारयात्राम्। 'विहारस्तु जिनालये, लीलायां भ्रमणे स्कन्धे।' (अनेकार्थ० ३.१२०३)। 'गमनोत्सवयोर्यात्रा' (त्रिकाण्ड० ३.९२२)। पालि- विहारो (विहारः)। यात्रा (यात्रा)।

• अयासु = जाया करते थे। सँ.- न्ययासुः, निरयासिषुः। (लुङ् लकार)।

• मगव्या = आखेट। सँ.- मृगया (मृग्यन्ते पशवोऽस्यामिति।) 'मृगया-मृगं यात्यनया। (शिकार)। पशुवधफलके व्यापारे आखेटके। (शब्द०)। पालि-मिगवो (मृगयः)।

• अभीरमकानि = आमोद-प्रमोद। सँ.- अभिरमकाणि। पालि-अभिरम्मो (अभिरम्यः)।

• अहंसु = होते थे। सँ.- अभूवन्।

• संतो = हुआ हुआ। सँ.- सन्। पालि-संतो (सन्)।

• अयाय = गया। सँ.- इयाय।

• संबोधि = बोधगया को। सँ.- सम्बोधिम्। पालि-संबोधि (=perfect knowledge or enlightenment) (Childers).

• धंमयाता = धर्मयात्रा। सँ.- धर्मयात्रा।

• हिरंण्यपटिविधानो = सुवर्ण से पोषण। सँ.- हिरण्यप्रतिविधानम्। (हिरण्यम्- ह्रियत आयम्यमानमिति वा, ह्रियते जनाज्जनमिति वा, हर्यतेर्वा स्याद्योगाकर्मणः। हिरण्यं हितरमणं भवतीति वा, हृदयरमणं भवतीति वा-नि० २.१०)। 'हिरण्यं द्रविणं द्युम्नमर्थ-रैविभवा अपि' (अमर० २.९४७)। 'प्रतिविधानं प्रतीकारे' (शब्द०)। पालि-हिरञ्ञं (हिरण्यम्)।

• जानपदस च जनस = जनपद के लोगों का। सँ.- जानपदस्य च जनस्य। जानपद- जनपदे भवः, तत आगतो वा। देशस्थे देशादागते च। जनपदः-जनाः पद्यन्ते गच्छन्ति यत्र। देशे। (शब्द०)। (जानपदः-जानेन उत्पत्त्या पद्यते, जनपदे भवः इति वा।)। 'त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्। ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्॥' (चाणक्य० ३१)। पालि-जानपदो (जानपदः)। जनपदो (जनपदः)।

• धमपरिपुछा = धर्म-संबंधी परिप्रश्न। सँ.- धर्मपरिपृच्छा। पालि-परिपुच्छा (परिपृच्छा)।

• तदोपया = इस (अवसर) के अनुकूल। सँ.- तदुपगा।

• भुय रति = अधिक आनंद। सँ.- भूयः रतिः। 'भूयः-अतिशयेन बहुः। बहुतरे।' 'रतिः रागे' (शब्द०)। (भूयः-अतिशयेन बहु।) (रतिः-रम्यते अनया इति। प्रीतिः।) सव्वदानं धम्मदानं जिनाति। सव्वं रसं धम्मरसो जिनाति॥ सव्वं रतिं धम्मरती जिनाति। तण्हक्खयो सव्वदुक्खं जिनाति॥ (सद्धम्म० Ch. XI.२०)। पालि-रति (रतिः)।

• भागे = भाग। सँ.- भागः (भज्यते इति। अंशः।) (अथवा) ऐश्वर्य-समूह। सँ.-भागः (भगानाम् ऐश्वर्याणां समूहः इति।)

गिरनार शिला : नवम अभिलेख

• एव = ऐसा। सँ.- एवम्। पालि-एवं।

• मंगलं = मङ्गल (मङ्गलाचार)। सँ.- मङ्गलम्। (मङ्गलं गिरतेर्गृणात्यर्थे, गिरत्यनर्थानिति वा -नि० ९.४)। (अथवा, मङ्गति हितार्थं सर्पति, मङ्गति दूरदृष्टमनेनास्माद्वेति। अरिष्टम्। कुशलम्।)। 'मङ्गलं शुभे' (त्रिकाण्ड० ३.९५८)। 'मङ्गलम् अभीष्टार्थसिद्धौ' (शब्द०)। 'कल्याणं मङ्गलं क्षेमं शातं शर्म शिवं शुभम्' (वैद्यक०)। पालि -मङ्गलं।

• आवाधेसु = रोगों के समय। सँ.- आवाधेषु। आबाधः -क्लेश, कष्ट। छेड़छाड़, हानि। (शब्द०)। पालि -आवाधो (आबाधः)।

• आवाहवीवाहेसु = पुत्रों, पुत्रियों के परिणय के समय। (आवाह -कन्या स्वीकार करना। विवाह -कन्या-दान करना।) सँ.- आवाहविवाहेषु। 'आवाहविवाहाभ्यां वा कृत्वा संयोगमसंयुक्तान् भेदयेत्।' (कौटिल्य -९.६)। पालि -आवाहो (आवाहः)। विवाहो (विवाहः)।

• पुत्रलाभेसु = पुत्र-प्राप्ति के समय। सँ. -पुत्रलाभेषु। पालि -लाभो (लाभः)।

• प्रवासम्हि = परदेस जाते समय। सँ.- प्रवासे। (प्रवसत्यस्मिन्निति प्रवासो देशान्तरम्। प्रशब्दो विप्रकर्षे। -उपसर्गार्थ०, प्रथम खंड, पृ.४४)। 'प्रवासः विदेशवासे' (शब्द०)। पालि -पवासो (प्रवासः)।

• एत तु = पर इन (अवसरों) पर। सँ.- अत्र तु। पालि -अत्र। अत्थ। तु।

• महिडायो = महिलाएं। सँ.- महिलाः। (महिला - मह्यते इति। स्त्रीमात्रम्)। 'महिला नार्यां गुन्द्रायाम्' (अनेकार्थ० ३.१२७७)। 'महिला, महेला -योषिति' (शब्द०)। पालि -महिला (महिला)।

• बहुविधं = बहुत प्रकार के। सँ.- बहुविधम्। पालि -बहुविधो (बहुविधा)।

• खुदं = तुच्छ। घटिया। सँ.- क्षुद्रम्। 'क्षुद्रो दरिद्रे कृपणे निकृष्टेऽल्पनृशंसयोः' (अनेकार्थ० २.४१०)। पालि -खुद्दो (क्षुद्रः)।

• निरथं = निरर्थक। सँ.- निरर्थम्। (निर्गतोऽर्थो यस्मात्)। पालि -निरत्थो (निरर्थः)।

• अपफलं = अल्प फल देने वाला। सँ.- अल्पफलम्।

• खो = निश्चय ही। सँ.- खलु। 'खलु प्रश्ने, सान्त्वने, वीप्सायां, माने, निषेधे, अनुनये, वाक्यस्य भूषणपूरणयोः, निश्चये, हेतौ च।' (शब्द०)। पालि -खलु।

• एतरिसं = ऐसा। सँ.- एतादृशम्। पालि -एतादिसो। एतारिसो। (एतादृशः)।

• ततेत = उसमें यह होता है। सँ.- तत्रैतत्। पालि -तत्र। तत्थ। एतद् (एतत्)।

• दासभतकम्हि = दासों और भृत्यों के प्रति। सँ.- दासभृतकेषु। (दासो दस्यतेः, उपदासयति कर्माणि - नि० २.१७)। (अथवा, दास्यते दीयते भृतिमूल्यादिकं यस्मै सः।) 'दासः प्रेष्यः परिस्कन्दो भुजिष्यपरिकर्मिणौ। परान्नः परपिण्डादः परजातः परैधितः॥' (अभिधान० ३.३६०-३६१)। 'भृतको भृतिभुक्कर्मकरो वैतनिकोऽपि सः।' (अमर० २.९८३)। पालि -दासो (दासः)। भतको (भृतकः)।

• सम्यप्रतिपती = शिष्ट व्यवहार। सँ.- सम्यक्प्रतिपत्तिः। (सम्यक्-अर्थेन सह समञ्यति सङ्गच्छते इति। सङ्गतः।)। (प्रतिपत्तिः -प्रतिपदनमिति। प्रागल्भ्यम्। प्रवृत्तिः।)। 'सम्प्रतिपत्तिः -समं+प्रतिपद्यते। वाद्युक्तार्थविषयस्वीकरणे 'श्रुत्वाभियोगं प्रत्यर्थी यदि तं प्रतिपद्यते सा तु सम्प्रतिपत्तिः स्यात्'। (शब्द०)। पालि -सम्मा (सम्यक्)। पटिपत्ति (प्रतिपत्तिः)।

• गुरूनं = गुरुजनों के प्रति। सँ.- गुरूणाम्। (गुरुः -गीर्यते स्तूयते देवगन्धर्वमनुष्यादिभिः, गृणाति उपदिशति वा।)। 'गुरुः -गिरत्यज्ञानं गृणाति उपदिशति वा धर्मम्' (शब्द०)। 'गुरुधर्मोपदेशकः' (अभिधान० १.७७)। 'मातामही मातुलानी तथा मातुश्च सोदरा। श्वश्रूः पितामही ज्येष्ठा धात्री च गुरवः स्त्रिषु॥' पालि -गुरु (गुरुः)।

• अपचिति = आदर का भाव। सँ.- अपचितिः। 'अपचितिः -पूजायां, हानौ व्यथायाञ्च' (शब्द०)। पालि -अपचिति।

• वतव्यं = कहना चाहिए। सँ.- वक्तव्यम्। पालि -वत्तब्बं।

• स्वामिकेन = स्वामी से। सँ.- स्वामिकेन। 'स्वामी प्रभौ गुहे।' (अनेकार्थ० २.३०२)। 'स्वामी अधिपतौ, ईश्वरे च' (शब्द०)। पालि -सामिको (स्वामिकः)।

• निस्टानाय = सिद्धि। सँ.- निष्ठानम्। 'निष्ठानं तु तेमनं स्यात्' (अभिधान० ३.३९९)। (निष्ठा -नितरां स्थितिः)। पालि -निट्ठानं (निष्ठानम्) =accomplishment, completion (Childers).

• अस्ता = है। सँ.- अस्ति। पालि -अत्थि।

• अनगहो = अनुग्रह। सँ.- अनुग्रहः। 'अनुग्रहोऽभ्युपपत्तिः' (अभिधान० ६.१५०८)। 'अनुग्रहः अभीष्टसम्पादनेच्छारूपे प्रसादे, आनुकूल्ये।' (शब्द०)। पालि -अनुग्गहो (अनुग्रहः)।

• सुहृदयेन = सहानुभूति रखने वाले के द्वारा। सँ.- सुहृदयेन। 'सुहृदयः- सुष्ठु हृदयं यस्य। प्रशस्तमनस्के।' (शब्द०)। पालि -सुहदयो (सुहृदयः)।

• सहायन = सहायक द्वारा। सँ.- सहायेन। (सहायः -सह एति इति। सहचरः। अनुकूलः।)। पालि -सहायो (सहायः)।

• ओवादितव्यं = दृढ़तापूर्वक कहना चाहिए। सँ.- अववदितव्यम्। (कार्यमवलम्ब्य वादो वदनं कथनमववादः)। 'अववादः -निन्दायाम्, विश्वासे, आज्ञायाम्, अवालम्बने च।' (शब्द०)। 'अववादस्तु निर्देशो निदेशः शासनं च तत्' (अमर०)। 'अवः सान्त्वन इति पङ्गुरुशिष्यः' (उपसर्गार्थ० -द्वितीय खंड, पृ.३०१)। पालि -ओवदति (अववदति)।

• पकरणे = मामले में। सँ.- प्रकरणे। 'प्रकरणं स्यात्प्रस्तावे' (अनेकार्थ० ४.१४५५)। पालि -पकरणं (प्रकरणम्)।

• कचं = करने योग्य। सँ.- कृत्यम्। पालि -किच्चं (कृत्यम्)।

• सक = संभव। सँ.- शक्यः। 'शक्य - समर्थनीये, साधयितुं योग्ये।' (शब्द०)। पालि -सक्को।

• स्वगं = स्वर्ग। सँ.- स्वर्गः। (स्वरिति गीयते इति। यद्वा सुष्ठु अर्ज्यते इति। देवलोकः।)। पालि - सग्गो (स्वर्गः)।

• आराधेतु = प्राप्त करना। सँ.- आराधयितुम्। 'आराधनं साधने स्यादवाप्तौ तोषणेऽपि च।' (अमर० ३.१२९८)। पालि - आराधेति (आराधयति)।

गिरनार शिला : दशम अभिलेख

• यसो = यश। ख्याति। सँ.- यशः (अश्नुते व्याप्नोतीति।)। पालि -यसो (यशः)।

• कीति = कीर्त्ति। सँ.- कीर्त्तिम्। पालि -कित्ति (कीर्तिः)। 'दानादिप्रभवा कीर्तिः शौर्यादिप्रभवं यशः' (माधवी)।

• महाथावहा = (कोई) बड़ी चीज। सँ.- महार्थावहाम्। पालि -महाअट्ठ- (महार्थ-)। आवहो (आवहः)।

• मञते = मानता है। सँ.- मन्यते। पालि -मञ्ञते। मञ्ञति।

• अञत = सिवाय इसके कि। सँ.- अन्यत्र। 'अन्यत्र व्यतिरेके, विनार्थे च।' (शब्द०)। पालि -अञ्ञत्र।

• तदाप्नो = संप्रति। सँ.- तदात्वं ('तदात्पनो' को 'तदात्पने' पढ़ने पर)। 'तत्कालस्तु तदात्वं स्यात् उत्तरः काल आयतिः' (अमर० २.७६६)। पालि -तदानं (तदात्वम्)।

• दिघाय = (भविष्य में) दीर्घ काल तक। सँ.- दीर्घायाम्। (दीर्घम् -दृणातीति।) (दीर्घं द्राघतेः -नि० २.१६)। 'दीर्घमायतम्' (अमर० ३.१०८६)। पालि -दीघो (दीर्घः)।

• धंमसुसुसा सुसुसता = धर्म की बात सुनने को लालायित हो। सँ.- धर्मशुश्रूषा शुश्रूषताम्। पालि -सुस्सूसा (शुश्रूषा)। ऐसे ही अन्य प्रयोग -पामोज्जेन पमोज्जितं। सुखेन सुखितो होति। चरति चारिकं। अधिट्ठितं अधिट्ठानं। गाथायो गन्थित्वा। पुप्फन्ति पुप्फिनो दुमा। लाभं लभामि सव्वत्थ। उपोसथं उपवसिस्सं।

• धंमवुतं = धर्म का आचरण। सँ.- धर्मवृत्तम्। (तुलना करें - सद्वृत्तम्, दुर्वृत्तम्)। पालि -वत्तं (वृत्तम्)।

• परिकमते = पराक्रम करता है। सँ.- पराक्रमते ('परिकमते' के स्थान पर 'पराकमते' पढ़ने पर)। (पराक्रमः -पराक्रम्यतेऽनेनेति) विक्रमः। उद्योगः।)। पालि -परक्कमति (पराक्रमते)। [टिप्पणी -परि-✓क्रम् का अर्थ है परिक्रमा करना, चलना, जो वर्तमान संदर्भ में उपयुक्त नहीं हैं, अतः पाठांतर परा-✓क्रम् स्वीकार किये जाने के योग्य है।]

• पारत्रिकाय = परलोक के लिए। सँ.- पारत्रिकाय। (पारत्रिकं -परत्र भवं, हितं वा। परलोकहितकारके कर्म्मणि परलोकभवे च। (शब्द०)। पालि -परत्थ (परत्र)।

• किंति = कैसे। सँ.- किमिति। पालि -किंति।

• सकले = सब (लोग)। सँ.- सकलः (कला प्रकृतिस्तया सह वर्तते इति। कृत्स्नः। अखिलः।)। पालि -सकलो (सकलः)।

• अपपरिस्रवे = पाप-कर्मों से विरतप्राय। सँ.- अल्पपरिस्रवः।

• अपुंञं = पाप। सँ.- अपुण्यम्। (पुण्यम् -पूयतेऽनेनेति)। शुभादृष्टम्। (सुकृतम्)। 'पुण्यं तु सुन्दरे। सुकृते पावने धर्मे।' (अनेकार्थ० २.३७९)। 'पुण्यं शुभादृष्टे धर्म्मे' (शब्द०)। पालि -अपुञ्ञं (अपुण्यम्)।

• उसटेन = बड़े (व्यक्ति) द्वारा। सँ. - उच्छितेन। 'उच्चप्रांशुन्नतोदग्रोच्छिताः' (अमर० ३.१०८७)। पालि -उच्छितो (उच्छितः)।

• अगेन पराक्रमेन = उत्तम पराक्रम द्वारा। सँ.- अग्र्यात् पराक्रमात्। (अग्र्यः-अग्रे भवः। उत्तमः।)। अग्र -सबसे आगे का, सर्वोत्कृष्ट, सर्वप्रथम। (संस्कृत०)। 'अग्रं पुरः प्रथमेऽधिके' (अनेकार्थ० २.३९८)। 'अग्रम्प्रथमेऽपि ख्यातम्' (द्विरूप० १९)। पालि -अग्गो (अग्रः)।

• परिचजित्या = छोड़ कर। सँ.- परित्यज्य। पालि -परिच्चजति (परित्यजति)।

गिरनार शिला : एकादश अभिलेख

• धंमसंस्तवो = धर्म का परिचय। सँ.-धर्मसंस्तवः। 'संस्तवः स्यात् परिचयः' (अभिधान० ६.१५१३)।

• धंमसंविभागो = धर्म का बँटवाड़ा। सँ.-धर्मसंविभागः। पालि -संविभागो (संविभागः)।

• धंमसंबधो = धर्म का संबंध। सँ.-धर्मसम्बन्धः। (सम्बन्धः-सम्बध्यते इति।)। पालि - सम्बन्धो (सम्बन्धः)।

• आव = यहां तक कि। सँ.-यावत्। पालि -याव।

• पटीवेसियेहि = पड़ोसियों द्वारा। सँ.-प्रतिवेश्यैः। पालि -पटिविस्सके (प्रतिवेश्यः)।

• तथा करु = वैसा करने से। सँ.-तथा कुर्वन्।

• इलोकचस = इस लोक की। सँ.-ऐहलौकिकस्य। 'ऐहलौकिक- इह लोके भवः। इहलोकजाते।' (शब्द०)। पालि -इहलोकिको (इहलौकिकः)।

• आरधो = प्राप्ति। सँ.-आराधः। 'आराधनं साधनं स्यादवासौ तोषणेऽपि च।' (अमर० ३.१२९८)। पालि -आराद्धो (आराद्धः)।

• अंनंतं = असीम। सँ.-अनन्तम्। पालि -अनन्तं। -'अनन्तं खे निरवधौ' (अनेकार्थ० ३.८३७)

गिरनार शिला : द्वादश अभिलेख

• पवजितानि = गृहत्यागियों को। सँ.-प्रव्रजितान्। (प्रव्रजति = प्रकर्षेण व्रजति न प्रत्यावर्तत इत्यर्थः-उपसर्गार्थ० खंड-१ -पृ.४८)। 'प्रव्रजितः-संन्यासिनि' (शब्द०)। पालि -पव्वजितो (प्रव्रजितः)।

• घरस्तानि = गृहस्थों को। सँ.-गृहस्थान्। गृहस्थः-गृहेषु दारेषु तिष्ठति अभिरमते। (शब्द०)। पालि -घरावासो (गृहावासः)।

• विधाधाय = विविध प्रकार के। सँ.-विविधया। 'विविधस्तु बहुविधो नानारूपः पृथग्विधः' (अभिधान० ६.१४६९)। पालि - विविधो (विविध)।

• पूजाय = अर्चना से। सँ.-पूजया। (पूजा-पूजनमिति। नमस्या। अर्चनम्। सपर्या। अर्चा।) 'पूजा त्वपचितिः' (अभिधान०परिशिष्ट-३.२०३)। पालि -पूजा (पूजा)।

• पूजयति = सत्कार करता है। सँ.-पूजयति। पालि -पूजेति।

• ने = उनकी। सँ.-एनान्।

• सारवढी = सार की वृद्धि। सँ.-सारवृद्धिः। 'उत्तरोत्तरमुत्कर्षो वस्तुनः सार उच्यते।' 'सारो बले स्थिरांशे च' (अमर० ३.१३४४)। 'वृद्धिः समृद्धौ, अभ्युदये, सम्पत्ती, समूहे च।' (शब्द०)। पालि -सारो (सारः)। वुद्धि, वड्ढि (वृद्धिः)।

• वचिगुती = वाणी का संयम। सँ.-वचोगुप्तिः। (वचः-उच्यते इति।) 'व्याहार उक्तिर्लपितं भाषितं वचनं वचः' (अमर० १.१५७)। 'गुप्तं रक्षितगूढयोः' (त्रिकाण्ड० ३.७०७)। पालि -वचो (वचः)। गुत्तो (गुप्तः)।

• आत्मपासंडपूजा = अपने संप्रदाय का आदर। सँ.-आत्मपाषण्डपूजा। पालि -अत्तनो (आत्मनः)। पासण्डो (पाषण्डः)। पूजा (पूजा)।

• परपासंडगरहा = अन्य संप्रदाय का अनादर। सँ.-परपाषण्डगर्हा। (गर्हा-गर्ह्यते इति। निन्दा।)। पालि -गरहा (गर्हा)।

• अप्रकरणम्हि = विना प्रसंग के। सँ.-अप्रकरणे।

• लहुका = हल्का। सँ.-लघुका। (लघु-लङ्घते अनेनेति। अगुरुः। निःसारः। ह्रस्वः।) 'लघ्वसारं ह्रस्वं चार्वगुरु द्रुतम्' (अनेकार्थ० २.६९)। पालि -लहुको (लघुकः)।

• पूजेतया = आदर के योग्य। सँ.-पूजयितव्याः।

• तेन तन = उन-उन (अर्थात, जिस-किसी)। सँ.-तेन तेन।

• एवं करु = ऐसा करता हुआ। सँ.-एवं कुर्वन्। पालि -एवं (एवम्)। कुव्वानो (कुर्वाणः)।

• तदंञथा = इसके विपरीत। सँ.-तदन्यथा। पालि -अञ्ञथा (अन्यथा)।

• छणति = क्षति पहुँचाता है। सँ.-क्षणोति (✓क्षण्-तनादिगण से निष्पन्न)।

• अपकरोति = अपकार करता है। सँ.-अपकरोति।

• आत्मपासंडभतिया = अपने संप्रदाय के प्रति अनुराग-विशेष होने के कारण। सँ.-आत्मपाषण्डभक्त्या। (भक्तिः-भज्यते इति। अनुरागविशेषः। श्रद्धा।)। पालि-भत्ति (भक्तिः)।

• दीपयेम = प्रकाशित करें (अर्थात, इसका गौरव बढ़ायें)। सँ.-दीपयेम। पालि-दीपेति (दीपयति)।

• बाढतरं = खूब बढ़ चढ़ कर। सँ.-बाढतरम्। 'बाढं प्रगाढं भृशकृच्छ्रयोः' (अमर० ३.१२१७)।

• उपहनाति = हानि करता है। सँ.-उपहन्ति।

• समवायो = संबंधविशेष। सँ.-समवायः। [समवाय्यते इति। (सम्-अव्-√अय् से निष्पादित) - समूह। सम्बन्धविशेषः।]। 'समवायः समूहे, मेलने' (शब्द०)। 'समुदायः समुदयः समवायश्चयो गणः। स्त्रियां तु संहतिर्वृन्दम्।' (अमर० २.५३६)। पालि-समवायो (समवायः)।

• अञमंञस = एक दूसरे के। सँ.-अन्योन्यस्य। पालि-अञ्ञोञ्ञो (अन्योन्यः)।

• धंमं = धर्म (अर्थात, धारण करने योग्य तत्त्व) को। सँ.-धर्मम्। (धर्मः-धरति लोकान्, ध्रियते पुण्यात्मभिरिति वा।)। 'एक एव सुहृद्धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः। शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यत्तु गच्छति॥' (हितोप० १.५९)।

• सुणारु = सुनें। सँ.-शृणुयुः।

• सुसुंसेर = सुनने के लिए उद्यत रहें। सुनाएं। सँ.-शुश्रूषेरन्।

• वहुसुता = वहुश्रुत। वहुत विद्वान। (*शाब्दिक अर्थ*-जिन्होंने वहुत कुछ श्रवण कर रखा है।)। सँ.-वहुश्रुताः। 'श्रुतं शास्त्रावधृतयोः' (अमर०)। पालि-वहुस्सुतो (वहुश्रुतः)।

• कल्याणागमा = शुभ सिद्धांतों वाले। सँ.-कल्याणागमाः। (कल्याणम्-कल्ये प्रातः अण्यते शब्द्यते इति। शुभम्। श्वःश्रेयसम्। मङ्गलम्।)। पालि-कल्याणो, कल्लाणो (कल्याणः)। आगमो (आगमः)। 'आगमस्वागतौ शास्त्रे' (अनेकार्थ० ३.१०६०)।

• तत्र तत = उस-उस में (अर्थात, अपने-अपने संप्रदाय में)। सँ.-तत्र तत्र। पालि-तत्र, तत्थ (तत्र)।

• प्रसंना = अनुरक्त। प्रसक्त। सँ.-प्रसन्नाः। 'प्रसन्न- निर्मले, सन्तुष्टे' (शब्द०)। पालि-पसन्नो (प्रसन्नः)।

• इथीअखमहामाता = स्त्र्यध्यक्ष महामात्र। सँ.-स्त्र्यध्यक्षमहामात्राः। (स्त्रियः स्त्यायतेरपत्रपणकर्मणः-नि० ३.२१)। 'स्त्री योषिति नार्य्याम्' (शब्द०)। 'अध्यक्षाधिकृतौ समौ' (अभिधान० ३.७२२)। (अध्यक्षः-अध्यक्ष्णोति समन्ताद् व्याप्नोति। छत्रधारणादिव्यवहारेष्वधिकृतः व्यापकः। (महामात्रः-महती मात्रा मर्यादा परिमाणं यस्येति। प्रधानः।)। पालि-इत्थि, इत्थी (स्त्री)। महामत्तो (महामात्राः)।

• वचभूमीका = व्रजभूमिक। सँ.-व्रजभूमिकाः। (व्रजः-व्रजन्ति सङ्घीभूय यान्त्यत्र। गोष्ठम्। पन्थाः।) (भूमिः-भवन्ति भूतान्यस्याश्रिते। पृथिवी, पृथ्वी।) 'व्रजः समूहे, गोष्ठे, पथि, मथुरासमीपस्थे देशभेदे च' (शब्द०)। पालि-वजो (व्रजः)। भूमि (भूमिः)।

• निकाया = (अधिकारी-)वर्ग। सँ.-निकायाः। (निकायः-निचीयते इति। संहतानां समुच्चयः।) 'स्यान्निकायः पुञ्जराशी' (अमर० २.५३८)। पालि-निकायो (निकायः)।

शाहवाजगढ़ी शिला : त्रयोदश अभिलेख

• कलिंग = कलिंग देश (अथवा कलिंग देश के निवासी)। सँ.-कलिङ्गाः। 'कलिङ्ग-पु. 'जगन्नाथात् पूर्वभागे कृष्णातीरान्तरं शिवे! कलिङ्गदेशः सम्प्रोक्तः' इत्युक्तदेशे। (शब्द०)। [तंत्रों में कलिंग देश का वर्णन इस प्रकार से किया गया है-'जगन्नाथात्समारभ्य कृष्णातीरांतगः प्रिये। कलिङ्गदेशः सम्प्रोक्तो वाममार्गपरायणः॥']। पालि-कालिङ्ग (कालिङ्गाः, कलिङ्गः)।

• दिअढमत्रे प्रणशतसहस्रे = डेढ़ लाख प्राणी। सँ.-द्वयर्द्धमात्रं प्राणशतसहस्रम्। द्वयर्द्धम् = अर्द्धं वा सार्धम्। डेढ़ गुना।)। ('मात्रा मानात्'-नि० ४.२५)। परिमाण जतलाने के लिए 'मात्रं' का प्रयोग प्रायःकर समास के अंत में होता है। 'प्राणास्तु जीविते' (अनेकार्थ० २.१६२)। 'सहस्रं-समानं हसति। दशशतसङ्ख्यायां, वहुसङ्ख्याया, तत्सङ्ख्यान्विते च।' (शब्द०)। पालि-दियड्ढो, दिवड्ढो (द्वितीयार्द्धः)।

• अपवुढे = वंदी वना कर वाहर भिजवाये गये। सँ.-अपोढम्। (अप-√वह् से निष्पन्न)। 'अपोढ- अप-उह-क्त। निरस्ते, वाधिते च।'(शब्द०)। पालि-अपवहति (अपवहति)।

• हते = मारे गये। सँ.-हतम्। (हत- 'नाशिते। प्रतिहते, प्रतिवद्धे, आशारहिते, गुणिते च।' (शब्द०)। पालि-हतो (हतः)।

• बहुतवतके = (उससे) कई गुना। सँ.-बहुतावत्कम्। पालि-बहु (बहु)। तावतको (तावत्कः)।

• मुटे = मर गये। सँ.-मृतम्। 'मृतं मृतौ याचिते च' (अनेकार्थ० २.२०१)। पालि-मतो (मृतः)।

• ततो पच = उसके पश्चात। सँ.-ततः पश्चात्। 'पश्चात् प्रतीच्यां चरमे' (अनेकार्थ० १७९२)। पालि-ततो (ततः)। पच्छा (पश्चात्)।

• अधुन = अब। सँ.-अधुना (अस्मिन्काले)। 'साम्प्रतमधुनेदानीं सम्प्रति' (अभिधान० ६.१५३०)। पालि-अधुना।

• लधेषु = हस्तगत हो जाने पर। सँ.-लब्धेषु। 'लब्धमासादितम्' (अभिधान० ६.१४९०)। पालि-लद्धो (लब्धः)।

• तिव्रे = तीव्र। सँ.-तीव्रम्। तिग्मं तीक्ष्णं खरं तीव्रं चण्डमुष्णं पटु स्मृतम्। (हलायुध० ४०)। 'तीव्रं दुःसहे, अत्यग्रे, नितान्ते च' (शब्द०)। पालि-तिब्बो (तीव्रः)।

• धमशिलन = धर्म का अनुशीलन। सँ.-धर्मशीलनम्। (शीलं 'अभ्यासे, अतिशायने, प्रवर्त्तने च') (शब्द०)। शीलनं- Repeated practice, exercise, study, cultivation.

• धमकमत = धर्म के प्रति रुझान। सँ.-धर्मकामता। पालि-कामता (कामता)।

• धमनुशस्ति = धर्मानुशासन। सँ.-धर्मानुशास्तिः। पालि-अनुसिट्ठि (अनुशिष्टिः)।

• अनुसोचन = अनुताप। सँ.-अनुशोचनम्। पालि-अनुसोचति (अनुशोचति)।

• विजिनिति = विजय करके। सँ.-विजित्य। पालि-विजित्वा (विजित्य)।

• विजिनमनो = विजय करते समय। सँ.-विजीयमाने। पालि-विजिनति, विजेति (विजयति)।

• वध = मारण। सँ.-वधः। (हननमिति। प्राणवियोगफलकव्यापारः। मारणम्। घातनम्। हिंसा।)। 'वधो हिंसकहिंसयोः (अनेकार्थ० २.२५९)। पालि-वधो (वधः)।

• मरणं = मरण। सँ.-मरणम्। (म्रियतेऽनेनेति। मृत्युः। मृतिः।)। पालि-मरणं।

• अपवहो = अपहरण। सँ.-अपवाहः। देखें - स्वराष्ट्रं वासयेद् राजा परदेशापवाहनात्। (हितोप०)।

• वेदनियमतं = वेदनाजनक। मर्मस्पर्शी। सँ.-वेदनीयमतम्। पालि-वेदना (वेदना)।

• गुरुमतं = गंभीर (बात)। सँ.-गुरुमतम्। पालि-गुरु (गुरु)। 'गुरुस्त्रिलिङ्ग्यां महति दुर्जरालघुनोरपि' (त्रिकाण्ड० ३.८९८)। मतं (मतम्)।

• चु = परंतु। सँ.-तु। 'तु विशेषेऽवधारणे। समुच्चये पादपूर्तौ।' (अनेकार्थ० १७७७)। पालि-तु।

• अग्रभुटिसुश्रुप = वृद्ध जनों की सेवा। सँ.-अग्रभृतिशुश्रूषा। 'भृतिर्मूल्यभरणयोः' (अनेकार्थ० २.१९८)।

• दसभटकनं = दासों और भृत्यों में। सँ.-दासभृतकेषु। 'दासः प्रेष्यः परिस्कन्दो भुजिष्यपरिकर्मिणौ। परान्नः परपिण्डादः परजातः परैधितः॥' (अभिधान० ३.३६०-३६१)। 'भृतकः वेतनेन कर्म्मकरे' (शब्द०)।

• द्रिढभतित = प्रगाढ़ भक्ति। सँ.-दृढभक्तिता। दृढ़ = प्रगाढ़।

• अपग्रथो = आघात। सँ.-अपग्रथः।

• अभिरतन = प्रियजनों का। सँ.-अभिरक्तानाम्।

• निक्रमणं = देश-निकाला। सँ.-निष्क्रमणम्। 'निष्क्रमणं बहिर्गमने' (शब्द०)। पालि-निक्खमनं।

• सुविहितनं = उनका जिनका अपना जीवन सुव्यवस्थित है। (विकल्प - जिनको पूर्ण सुविधा, अर्थात पूरा सुभीता, है)। सँ.-सुविहितानाम्। (तुलना करें - 'सर्वकामैः सुविहिताः' -महाभा० वनपर्व ६९/१८; सुविहिताः समृद्धाः। 'विहित- 'अन्नपानैः सुविहिताः'- रामा० १/१३/१६, सुविहिताः सम्यग्योजिताः साधु संगमिताः।)

• सिहो = स्नेह। सँ.-स्नेहः। 'स्नेहः प्रेमणि' (शब्द०)। पालि-सिनेहो, स्नेहो (स्नेहः)।

• अविप्रहिनो = अक्षुण्ण। सँ.-अविप्रहीनः। पालि-पहीनो (प्रहीनः)।

• वसन = विपत्ति। सँ.-व्यसनम्। 'स सुहृद् व्यसने यः स्यात्' (पञ्च० १.३३७)। 'व्यसनं विपत्तौ, भ्रंशे, कामजाते, कोपजाते च स्त्रीभोगमद्यपानादौ दोषे, दैवादिकृते उपद्रवे च' (शब्द०)। पालि-व्यसनं, व्यसनं।

• अपग्रथो = आघात। सँ.-अपग्रथः।

• प्रतिभगं = भागीदारी। सँ.-प्रतिभागः। पालि-पटिभागो (परंतु इसका अर्थ भिन्न है। संज्ञा होने पर-'शत्रु'। विशेषण होने पर-'समान, सदृश'।)

• सव्रमनुशनं = सब मनुष्यों की। सँ.-सर्वमनुष्याणाम्। ('मनुष्यः मानवे जातिभेदे'- शब्द०)। पालि-सब्बो (सर्वः)। मनुस्सो (मनुष्यः)।

• एकतरे पि प्रपडस्पि = किसी न किसी संप्रदाय में। सँ.-एकतरे अपि पाषण्डे।

• यमत्रो = जितने भी। सँ.-यन्मात्रः।

• अपकरेयति = अपकार करे। सँ.-अपकुर्यात्। पालि-अपकरोति (अपकरोति)।

• क्षमितवियमते = (देवानांप्रिय के) मत में क्षमा कर देना चाहिए। सँ.-क्षन्तव्यमतम्। पालि-खमितव्वो (क्षन्तव्यः)। मतं (मतम्)।

• शको = शक्य। सँ.-शक्यम्। 'शक्य- समर्थनीये, साधयितुं योग्ये' (शब्द०)।

• क्षमनये = क्षमा करने के लिए। सँ.-क्षमणाय। (क्षमा-'बाह्ये चाध्यात्मिके चैव दुःखे चोत्पादिते क्वचित्। न कुप्यति न वा हन्ति सा क्षमा परिकीर्तिता॥-एकादशी०)। पालि-खमनं (क्षमणम्)।

• अटवि = अटवी-निवासी। वनवासी। सँ.-अटव्यः (=अटवीवासिनः)। 'अटव्यरण्यं विपिनं गहनं काननं वनम्' (अमर० २.३२७)। पालि-अटवी (अटवी)।

• अनुनेति = आग्रह करता है। सँ.-अनुनयति (=आनुकूल्याय प्रेरयति)। पालि-अनुनयो (अनुनयः)।

• अनुनिजपेति = (अपने विचारों में) ढालता है। सँ.-अनुनिध्यायति।

• अनुतपे पि = संतापित होने पर भी। सँ.-अनुतापे अपि। पालि-अनुतापो (अनुतापः)।

• प्रभवे = प्रभाव। शक्ति। सँ.-प्रभावः। 'प्रभावस्तेजसि शक्तौ' (अनेकार्थ० ३.१३०४)। पालि-पभावो।

• वुचति तेप = उनको कहा जाता है। सँ.-उच्यते तेभ्यः। पालि-वुच्चति (उच्यते)। तेसं (तेभ्यः)।

• अवत्रपेयु = लज्जित हों। सँ.-अवत्रपेरन्। [अथवा, अपत्रपेरन् (अप-√त्रप् से निष्पन्न) =लज्जा के मारे सिर झुका लेना। 'य आत्मनापत्रपते भृशं नरः स सर्वलोकस्य गुरुर्भवत्युत।' (महाभा०)।

• हंञेयसु = मारे जायें। सँ.-हन्येरन्। पालि-हन्ति (हन्ति)।

• समचरियं = शांति का जीवन। सँ.-शमचर्याम्। (तुलना करें - व्रतचर्या, तपश्चर्या)। पालि-समचरिया (शमचर्या)।

• रभसियं = जोर-जबरदस्ती होने पर (भी)। सँ.-राभस्ये। 'रभसो वेगहर्षयोः' (अनेकार्थ० ३.१३५४)। पालि-रभस (रभस)। तुलना करें - Lat. -'rabies' (=madness, anger).

• अयि = यह। सँ.-अयम्। (अयम् एततरोऽमुष्मात्-नि० ३.१६)। पालि-अयं।

• मुखमुत = मतानुसार मुख्य। सँ.-मुख्यमतः। (मुख्यः-मुखे आदौ भवः। श्रेष्ठः। अग्रयः। प्रधानः।) 'प्रधानमुत्तमं रम्यं श्रेष्ठं मुख्यमनुत्तमम्। वरं वरेण्यं प्रमुखं परार्द्ध प्रवरं तथा॥' (वैद्यक०)। 'मतं तु संमतेऽर्चिते' (अनेकार्थ० २.१९८)। पालि-मोक्ख (मुख्य)।

• धमविजयो = धर्मविजय। सँ.-धर्मविजयः। 'विजयो जयः' (अभिधान० ३.८०३)। पालि-विजयो (विजयः)।

• अंतेषु = सीमावर्ती राज्यों में। सँ.-अन्तेषु। (अन्तोऽततेः-नि० १.६)। 'अन्तोऽवसानं सीमा च' (अभिधान० ४.९६२)।

• अ षपु पि योजनशतेषु = छः सौ योजन (दूरी तक) भी। सँ.-आ षड्भ्यः अपि योजनशतेभ्यः। 'षड्भिर्यवैः स्यादङ्गुष्ठ एतैर्द्वादशभिर्भवेत्॥ वितस्तिः स्यादतो द्वाभ्यां हस्तः स्यात्तच्चतुष्टयम्। दण्डो धन्वन्तरं तस्य सहस्रद्वितयेन तु॥ क्रोशस्ताभ्यां तु गव्यूतिस्तवयं योजनं मतम्।' (त्रिकाण्ड० २.२०२-२०४)। 'चतुष्क्रोशं तु योजनम्' (अभिधान० ३.८८८)। षट्-षट् पुनः सहतेः-नि० ४.२७)। (योजन- √युज् से। A measure of distance equal to four क्रोशs or eight or nine miles - V.S.Apte) (600 योजन= about 1,500 miles - Romila Thapar). पालि-आ (आ)। योजनं (योजनम्)। 'I look upon the yojan as about equivalent to 12 miles.'(Childers)

• परं = परे। सँ.-परम्। पालि-परं।

• चतुरे ४ रजनि = चार (४) राजा। सँ.-चत्वारः ४ राजानः। पालि-चत्तारो (चत्वारः)।

• तुरमये नम = तुरमय नाम का। सँ.-तुरमयः नाम। (नाम-नामयतीति वा, नामयते नाम्यतेऽनेन वा। 'एवं नामास्तु'। प्राकाश्यम्। उदाहरण-'हिमालयो नाम नगाधिराजः' (हिमालयः प्रकाशोऽतिप्रसिद्धः इत्यर्थः।) पालि-नाम। तुरमय = Ptolemy II Philadelphos of Egypt (B.C. 285-247)

• अंतिकिनि = अंतेकिन। सँ.-अन्तेकिनः। Antigonos II Gonatas, King of Macedonia (B.C. 278-7 to 242 or 239), grandson of Antigonos I.

• मक = मक। सँ.-मकः। Magas, King of Cyrene in North Africa, west of Egypt (c. B.C. 285-258).

• अलिकसुदरो = अलिकसुन्दर। सँ.-अलिकसुन्दरः। (अलिकम्-अल्यते भूष्यते इति। ललाटम्।) (सुन्दरः-सुष्ठु उनत्ति आद्रीकरोति चित्तमिति। मनोहरम्। मनोरमम्। अभिरामम्।) Alexander, King of Epirus, son of Pyrrhus (c.B.C. 272-255) or Alexander of Corinth (c.B.C. 252-244).

• निच = नीचे (दक्षिण में)। सँ.-नीचाः। (नीच-नीचैर्निचितं भवति- नि० ४.२४)। 'नीच- निकृष्टामीं लक्ष्मीं चमति। पामरे निम्ने वामने च।' (शब्द०)। 'न्यङ्नीचखर्वह्रस्वाः' (अमर० ३.१०८८)।

• चोडपंड = चोळ और पाण्ड्य। 'चोडः कञ्चुकदेशयोः' (अनेकार्थ० २.१३२)। 'चोल-चोला इति ख्याते पुंसां वस्त्रभेदे च द्राविड़कलिङ्गयोर्मध्ये, देशभेदे पु.।' (शब्द०)। सँ.-चोलपाण्ड्याः।

• अव = तक। सँ.-यावत्। 'यावत्-त्रि. यत्परिमाणमस्य। यत्परिमाणे। यावति। (शब्द०।

• रजविषवस्पि = राजा के राज्य में। सँ.-राजविषये। 'विषय आश्रये' (अमर० ३.११४१)। 'विषयः-इन्द्रियगोचरे शब्दादौ, देशे च।' (शब्द०)। पालि- विसयो (विषयः)।

• योनकंबोयेषु = यवनों और कम्बोजों में। सँ.-यवन-कम्बोजेषु। 'यवन-पु. देशभेदे, तद्देशस्थे जने ब.व.।' (शब्द०)। कम्बोज-'पञ्चनदं तन्नाम्न्य म्लेच्छाद्दक्षिणपूर्वतः कम्बोजदेश' इत्युक्तदेशे च। (शब्द०)।

• नभकनभितिन = नाभकों और नाभपंक्तियों में। सँ.-नाभकनाभपंक्तिषु।

• भोजपितिनिकेषु = भोजों तथा पितिनिकों में। सँ.-भोजपितिनिकेषु।

• अंध्रपलिदेषु = अंध्रों एवं पुलिंदों में। सँ.-अन्ध्रपुलिन्देषु। अन्ध्रः-देशभेदे, तत्रस्थ-लोके, जातिभेदे च। (शब्द०)। 'पुलिन्दः-चाण्डालभेदे।' (शब्द०)। 'पुलिन्दा नाहला निष्ट्याः शबरा वरुटा भटाः। माला भिल्लाः किराताश्च सर्वेऽपि म्लेच्छजातयः॥' (अभिधान० ३.९३४)

• अनुवटंति = अनुवर्तन करते हैं। सँ.-अनुवर्तन्ते (=अविच्छेदेन प्रवर्तयन्ति। अनुः सातत्ये।) पालि-अनुवत्तति (अनुवर्तते)।

• दुत = दूत। सँ.-दूताः। (दूतः-दूतो जवतेर्वा, द्रवतेर्वा, वारयतेर्वा-नि० ५.१)। 'दूतः सन्देशहरे वार्त्ताहरे' (शब्द०)। पालि-दूतो (दूतः)।

• व्रचंति = जाते हैं। सँ.-व्रजन्ति। पालि-वजति (व्रजति)।

• श्रुतु = सुनकर। सँ.-श्रुत्वा। पालि-सुत्वा, सुत्वान, सुणित्वान, सुणिय।

• धमवुटं = धर्मवृत्त। सँ.-धर्मवृत्तम्। पालि-वत्तं (वृत्तम्)।

• विधनं = विधान। सँ.-विधानम्। 'विधानं हस्तिकवले प्रेरणेऽध्यर्चने धने। चेतनोपायविधिषु प्रकारे वैरकर्मणि॥' (अनेकार्थ० ३.१०१६- १०१७)। पालि-विधानं।

• अनुविधियंति = अनुसरण करते हैं। सँ.-अनुविदधति। 'उपतिष्ठति तिष्ठन्तं गच्छन्तमनुगच्छति। करोति कुर्वतः कर्मच्छायेवानुविधीयते॥' (महाभा० ६ ७५३)

• प्रितिरसो = तृप्ति का आस्वादन। सँ.-प्रीतिरसः। 'प्रीतिः हर्षे, आमोदे, तृप्तौ च' (शब्द०)। 'रसः- रस्यते इति। आस्वाद्ये।' (शब्द०)। परायत्तः प्रीतेः कथमिव रसं वेत्तु पुरुषः' (मुद्रा० ३.४)। पालि-पीति (प्रीतिः)। रसो (रसः)।

• परत्रिकम् = पारलौकिक। सँ.-पारत्रिकम्। पारत्रिकं- परत्र भवं। परलोक-हितकारके कर्म्मणि परलोकभवे च। (शब्द०)। पालि-परत्थ (परत्र)।

• मेञति = मानता है। सँ.-मन्यते। पालि-मञ्ञति।

• एतये च अटये = और इस प्रयोजन के लिए। सँ.-एतस्मै च अर्थाय। 'अर्थो हेतौ प्रयोजने' (अनेकार्थ० २.२२४)।

धौली शिला : प्रथम पृथक अभिलेख

• वचनेन = आज्ञा से। हवाले से। सँ.-वचनेन। 'व्याहार उक्तिर्लपितं भाषितं वचनं वचः।' (अमर० १.१५७)। पालि- वचनं (वचनम्)।

• तोसलिय = तोसली में। सँ.-तोसल्याम्।

• नगलवियोहालका = नगर व्यवहारक। सँ.-नगरव्यवहारकाः। (नगरम्-नगा इव प्रासादादयः सन्ति यत्र। बहुलोकवासस्थानम्। पूः। पुरम्।)। तुलना करें पौरव्यावहारिक (कौटिल्य)। पालि-नगरं (नगरम्)। वोहारिको (व्यावहारिकः) = A royal officer skilled in the law, a magistrate (Childers).

• अं किछि = जो कुछ। सँ.-यत्किञ्चित्। पालि-यं किञ्चि।

• दखामि = (उचित) समझता हूं। सँ.-पश्यामि। पालि-पस्सति (पश्यति)।

• हकं = मैं। सँ.-अहम्। पालि-अहं।

• कंमन = कर्म द्वारा। सँ.-कर्मणा। (कर्म कस्मात्; क्रियते इति सतः-नि० ३.१)। पालि-कम्मना, कम्मुना।

• दुवालते = (उचित) उपायों से। सँ.-द्वारतः। 'उपाये निर्गमे द्वारम्।' (त्रिकाण्ड० ३.३०९)। पालि-द्वारं। दुवारं। (द्वारम्)।

• आलभेहं = मैं आरंभ करूं। सँ.-आरभे अहम्। पालि-आरभति (आरभते)।

• तुफेसु = आप में। सँ.-युष्मासु। पालि-तुम्हेसु।

• आयत = स्थापित हैं। सँ.-आयताः। आयामय उपरमय स्थापयेत्यर्थः (उपसर्गार्थ०-खंड ३-पृ. ४९७)। पालि-आयतो (आयतः)।

• पनयं = प्रश्रय। सँ.-प्रणयम्। (प्रणयः-प्रणयनम्। प्रश्रयः। प्रेम।) 'प्रणयः प्रेमयाच्ञयोः।' (अनेकार्थ० ३.१०९१)। पालि-पणयो (प्रणयः)।

• सु = (अनर्थक)। सँ.-स्वित्। 'स्वित् प्रश्ने च वितर्के च तथैव पादपूरणे।' (मेदिनी०)। पालि-सु।

• पजा = संतान। सँ.-प्रजा। (प्रजाता इति। सन्ततिः।) 'प्रजा लोके सन्ततौ च'। (अनेकार्थ० २.८७)। पालि-पजा।

• अथा = जैसे। सँ.-यथा। पालि-यथा।

• यूजेवू = संयुक्त हों। सँ.-युज्येरन्। पालि-युञ्जति (युनक्ति, युते)।

• पापुनाथ = तुम समझते हो (पकड़ पाते हो)। सँ.-प्राप्नुथ। पालि-पापुणाति, पापुणोति, पप्पोति (प्राप्नोति)।

• आवगमुके = कितना गहरा (मंतव्य)। सँ.-यावद्गमकः। गमक-विशेषण 1. Indicative or suggestive, a proof or index of; तदेव गमकं पाण्डित्यवैदग्ध्ययोः (मालती० १.७)। यावत्- यत्परिमाणमस्य। (शब्द०)। गमक- गमयति बोधयति इति। (शब्द०)। पालि-याव, यावं (यावत्)। गमिका (गमिकः)।

• केछ = कदाचित। सँ.- कच्चित्।

• एकपुलिसे = विरला व्यक्ति। (अथवा) व्यक्तिविशेष। सँ.-एकपुरुषः। (पुरुषः पिपर्ति पूरयति बलं यः, पूर्षु शेते य इति वा। पुमान्। नरः। कर्मार्हः।)। पालि-एको (एकः)। पुरिसो (पुरुषः)।

• सुविहिता = पूर्ण-सुविधा-संपन्न। सँ.-सुविहिताः।

• नितियं = (दंड-) नीति में। सँ.-नीत्याम्। नीतिः-नीयन्ते उन्नीयन्तेऽर्था अनया। (शब्द०)। पालि-नीति (नीतिः)।

• पालिकिलेसं = मुसीबत। सँ.-परिक्लेशम्।

• अकस्मा = अचानक। सँ.-अकस्मात्। 'अकस्मात्सपदि तत्क्षणे' (अभिधान० ६.१५३२)।

• बधनंतिक = बंधन से छुटकारा। सँ.-बन्धनान्तकम्। 'बन्धनं दाम संदानम्' (अभिधान० ४.१२७४)। 'बन्धनं निगडादिना संयमने वधे च' (शब्द०)।

• दविये = लंबे समय तक। सँ.-दवीयः।

• दुखीयति = दुःखी होते रहते हैं। कष्ट सहते रहते हैं। सँ.-दुःखायन्ते।

• मझं = निष्पक्ष भाव से। सँ.-मध्यम्। पालि-मज्झं।

• जातेहि = प्रवृत्तियों से। सँ.-जातैः। 'जातं व्यक्तौघजन्मसु' (त्रिकाण्ड० ३.७०९)। 'जातं समूहे, व्यक्ते, जन्मनि च' (शब्द०)। पालि-जातं।

• इसाय = ईर्ष्या (डाह) से। सँ.-ईर्ष्यया। (ईर्ष्या-ईर्ष्यणम्। परोत्कर्षासहिष्णुता। अक्षान्तिः।)। पालि-इस्सा (ईर्ष्या)।

• आसुलोपेन = क्रोध से। सँ.-आशुलोपेन। (आशु- ✓अश्-व्याप्तौ से निष्पन्न)। (लोपः- ✓लुप् से निष्पन्न)। पालि-आसु (आशु)। लोपो (लोपः)।

• निट्ठूलियेन = निष्ठुरता (बेरहमी) से। सँ.-नैष्ठुर्येण। 'निष्ठुरः कस्खटः क्रूरः परुषः कर्कशः खरः' (अभिधान० ६.१३८६)। पालि-निट्ठुरो (निष्ठुरः)।

• तूलनाय = त्वरा (जल्दबाजी से)। सँ.-त्वरणेन। 'त्वरा वेगे। अभीप्टलाभार्थं विलम्बासहने च।' (शब्द०)। पालि-तुर (वैदिक-तुर) का प्रयोग अन्य शब्दों के साथ ही होता है, यथा तुरगो, तुरङ्गो, तुरङ्गमो (तुरगः, तुरङ्गः, तुरङ्गमः = घोड़ा)।

• अनावुतिय = अनावृत्ति (अर्थात, अभ्यास छूट जाने) से। सँ.-अनावृत्या।

• आलसियेन = आलस्य से। सँ.-आलस्येन। (आलस्यम् - अलसस्य भावः।) 'आलस्यं-सत्यपि सामर्थ्येऽवश्यकर्तव्येऽनुत्साहरूपेऽलसत्वे।' (शब्द०)। पालि-आलसियं, आलस्यं, आलस्सं (आलस्यम्)।

• किलमथेन = थकान से। सँ.-क्लमथेन। 'क्लमथः क्लमे' (अमर० ३.११४०)। 'क्लमथः आयासे' (शब्द०)। अन्य रूप-क्लमः। क्लमथुः। पालि-किलमथो (क्लमथः)। किलमनं (क्लमनम्)।

• नितियं = हर समय। सँ.-नित्यम्। 'नित्यं नियमेन नियतं वा भवम्' (शब्द०)। (नियमेन भवम्। सततम्। अनिशम्।)। पालि-निच्चं।

• ए = जो। सँ.-ये। पालि-ये।

• किलंते सिया = थके रहते हैं। सँ.-क्लान्ताः स्युः।

• उगछ = उन्नति कर सकते। सँ.-उद्गच्छेयुः। पालि-उग्गच्छति (उद्गच्छति)।

• संचलितविये = चलना चाहिए। सँ.-सञ्चलितव्यम्। पालि-सञ्चरति (सञ्चरति)।

• वटितविये = आगे बढ़ना चाहिए। सँ.-व्रजितव्यम्। पालि-वजति (व्रजति)।

• एतविये = बार बार चलना चाहिए। सँ.-एतव्यम्। पालि-एतब्बो (एतव्यः)।

[इसी प्रकार का अन्य प्रयोग - 'चरेय्यं विहरेय्यं इरियेय्यं वत्तेय्यं .....ति' (चुल्ल० २.५.३४)।]

• आननं = ऋण से उऋण होना। अनृणता। सँ.-आनृण्यम्। (अनृणस्य भावः कर्म वा।)। पालि-आनण्यं।

• सम्पटिपादे = सम्यक रूप से प्रतिपादन करना। सँ.-संप्रतिपादः। सम्पटिपादने, बोधने, प्रतिपत्तौ च' (शब्द०)। पालि-पटिपादो (प्रतिपादः)।

• महापाये = बहुत हानिकारक। सँ.-महापाया। पालि-महा (महत्)। अपायो (अपायः)।

• विपटिपादयमीने = प्रतिपादन न किया जाने पर। सँ.-विप्रतिपाद्यमाने।

• लाजालधि = राजा (के प्रश्रय) की प्राप्ति। सँ.-राजाराद्धिः। पालि-राजा (राजा)। आरद्धो (आराद्धः)।

• दुआहले = दोहरा लाभ। सँ.-द्विफलः।

• मनोअतिलेके = अत्यधिक मनोयोग। सँ.-मनोऽतिरेकः। मनः-मन्यतेऽनेन। (शब्द०)। अतिरेकः-अतिशये, भेदे, प्राधान्ये, आधिक्ये च। (शब्द०)। पालि-मनो। मनं। (मनः)। अतिरेको (अतिरेकः)।

• एहथ = प्राप्त करेंगे। सँ.-एष्यथ। पालि-एस्सति (एष्यति)।

• तिसनखतेन = तिष्य नक्षत्र में। सँ.-तिष्यनक्षत्रेण। (तिष्यः=तुष्यन्त्यस्मिन् इति। पुष्यनक्षत्रम्।) 'तिष्यः पुष्ये कलियुगे' (अमर० ३.१३२०)। 'नक्षत्रमृक्षं भं तारा तारकाप्युडु वा स्त्रियाम्' (अमर० १.९४)। (नक्षत्रम्-न क्षरति क्षीयते वा। नक्षति शोभां गच्छति स्थानान्तरं गच्छति वा। तारा। उडु।)। पालि-फुस्सो (पुष्यः)। नक्खत्तं (नक्षत्रम्)।

• अंतला = बीच में। सँ.-अन्तरा। पालि-अन्तरा।

• खनसि खनसि = जैसे-जैसे अवसर मिले। सँ.-क्षणे क्षणे। (क्षणः-क्षणोति हन्ति नाशयति वा सर्वं यथाकालमायुरवसाने वा। काल एव युगान्ते सर्वमात्मसात् करोतीत्यर्थः। स एवांशभेदेन नानाख्यो भवतीत्यर्थः। अवसरः।)। 'क्षणः कालविशेषे स्यात्पर्वण्यवसरे महे। व्यापारविकलत्वे च परतन्त्रत्वमध्ययोः'॥ (अनेकार्थ० २.१४९)। 'क्वचिद्रुष्टः क्वचित्तुष्टो रुष्टस्तुष्टः क्षणे क्षणे। अव्यवस्थितचित्तस्य प्रसादोऽपि भयावहः॥' (शिष्ट०)। 'अहमपि लब्धक्षणः स्वगेहं गच्छामि।' (मालविका० —1, Pt.1, 138)।

• कलंतं = करते हुए। सँ.-कुर्वन्तः।

• चघथ = समर्थ हो जाओगे। सँ.-शक्ष्यथ।

• सस्वतं समयं = हर समय। सँ.-शाश्वतं समयम्। 'शाश्वत- शश्वद् भवः। सतते नित्ये।' (शब्द०)। (समयः-सम्यगेतीति। कालः।)। पालि-सस्सतो (शाश्वतः)। समयो (समयः)।

• [illegible] = [illegible]। सँ. परिबाधः। पालि -पलिबोधो (It is probably the [illegible] of a [illegible] between परिरोध and परिबाध. Or it may perhaps be a dialectic variety of परिबाध). (Childers).

• [illegible] = पाँच पाँच वर्षों में। सँ. -पञ्चसु पञ्चसु वर्षेषु। 'वर्षं [illegible] शरत्' (अभिधान० २.१५९)। पालि -पञ्चसु (पञ्चसु)। [illegible] (वर्षं, वर्षम्)।

• [illegible] = भेजूंगा। सँ. निष्क्रामयिष्यामि। पालि -निक्खामेति (निष्क्रामयति)।

• [illegible] = अकर्कश। सँ. -अकर्कशः। (कर्कश = कठोर। अमसृण। क्रूर। निर्दय।) 'कर्कशं कठिनं क्रूरं कठोरं निष्ठुरं दृढम्' (अमर० ३.१०९३)। 'कोमल पुन मुद्गलो मुदुसोमालसुकुमारा अकर्कशः' (अभिधान० ६.१३८७)। पालि कक्कसो (कर्कशः)।

• [illegible] = शांत स्वभाव वाला। सँ. अचण्डः। (चण्डः -चण्डते रुष्टो भवतीति। तीक्ष्णताविशिष्टः। अत्यन्तकोपनः।)। 'खरश्चण्डः' = त्रिकाण्ड० ३.६६५। पालि -चण्डो (चण्डः)।

• सखिनालंभे = नरमी को काम में लेने वाला। सँ. -श्लक्ष्णारम्भः। (श्लक्ष्ण - √श्लिष् से निष्पन्न)। श्लक्ष्ण = अल्पे, चिक्कणे, लौहे च। (शब्द०)। (आरम्भः आ √रभ् से निष्पन्न)। 'आरम्भः संभ्रमस्त्वरा' (अमर० ३.११५६)। तुलना करें - 'चण्डारम्भः समीरः' (वेणी० २.१८)। पालि -सण्हो (श्लक्ष्णः)। आरम्भो (आरम्भः)।

• होसति = होगा। सँ. -भविष्यति। पालि -हेस्सति, भविस्सति।

• उजेनिते = उज्जयिनी से। सँ. -उज्जयिनीतः। (उज्जयिनी, उज्जयनी - उत् ऊर्ध्वः जयः अस्ति अस्याः। अथवा उच्चैर्जयतीति। विशाला नगरी। अवन्ती। विक्रमादित्य राजधानी।) 'विशालोज्जयिनी समे' (त्रिकाण्ड० २.१९६)। पालि -उज्जेनी (उज्जयनी)।

• कुमाले = कुमार। सँ. -कुमारः। (कौ पृथिव्यां मारयति दुष्टान्। राजकुमारः।)। 'कुमारो भर्तृदारकः' (अमर० १.१९४)।

• हेदिसमेव = ऐसे ही। सँ. -ईदृशमेव। ईदृश् (श) - अस्येव दर्शनमस्य। (शब्द०)। पालि -एदिसो, एरिसो (ईदृशः)।

• [illegible] = (अधिकारी) वर्ग को। सँ. -वर्गम्। (वर्गः -वृज्यते इति। [illegible])। पालि -वग्गो (वर्गः)।

• [illegible] = अतिक्रमण होने देगा। बीतने देगा। सँ. अतिक्रामयिष्यति। पालि -अतिक्कामेति (अतिक्रामयति)।

• [illegible] = तक्षशिला से। सँ. -तक्षशिलातः। तक्षशिला -सिन्धुदेशे नगरीभेदे। (शब्द०)। पालि -तक्कसिला। (तक्षशिला)।

• [illegible] = अवहेलना किये बिना। सँ. -अहापयित्वा। पालि -अहापेत्वा (अहापयित्वा)।

• [illegible] = अपना। सँ. -आत्मनः। पालि -अत्तनो (आत्मनः)।

• [illegible] = जानकारी करेंगे। सँ. -ज्ञास्यन्ति। पालि -जानिस्सति (ज्ञास्यति)।

जौगड शिला : द्वितीय पृथक अभिलेख

• समापायं = समापा में (स्थित)। सँ. -समापायाम्। समापः -सम्यक् आपो यत्र। देवयजनस्थाने। (शब्द०)।

• लाजवचनिक = राजा के संदेश के रूप में। सँ. -राजवाचनिकम्। (वाचनिकं -वचनेन निर्वृत्तम्)।

• अथ पजाये इछामि किंति मे सवेणा हितसुखेन युजेयू -लिपिकर की भूल से इन पदों की पुनरावृत्ति होना प्रतीत होता है।

• अंतानं = सीमावर्ती लोगों की। सँ. -अन्तानाम्। 'अन्त्यश्चान्तः' (द्विरूप० ७)। 'अन्तोऽवसानं सीमा च' (अभिधान० ४.९६२)।

• किंछंदे = क्या सोचने वाला। सँ. -किंछन्दः। 'छन्दः अभिलाषे, वशतायाम्, विषभेदे च।' (शब्द०)। पालि -छन्दो (छन्दः)।

• अफेसु = हमारे बारे में। सँ. -अस्मासु। पालि -अम्हेसु।

• एताका = इतनी। सँ. -एतावती। पालि -एत्तको (पुँ.)।

• अनुविगिन = अनुद्विग्न। सँ. -अनुद्विग्नाः। उद्विग्न - उद्वेगयुक्ते, दुःखपरिहाराक्षमतया व्याकुलचित्ते, क्षुभिते च। (शब्द०)। पालि -उब्बिग्गो (उद्विग्नः)।

• ह्वेयू = होवें। सँ. -भवेयुः।

• ममियाये = मेरे में। सँ. -मयि। पालि -मयि।

• अस्वसेयु = आश्वस्त हों। सँ.–आश्वस्युः। 'आश्वासः स्यातु निर्वृतौ' (अनेकार्थ० ३.१३४६)। पालि–अस्ससति (आश्वसिति)।

• ममते = मेरे से। सँ.–मत्तः। पालि–मया।

• नो = नहीं। सँ.–न+उ। 'नो अभावे' (शब्द०)। पालि–नो।

• खं = दुःख। सँ.–दुःखम्। (दुर् दुष्टं खनतीति। यद्वा दुःखयतीति। पीडा। व्यथा। अर्तिः। आबाधा।) 'पीडा बाधा व्यथा दुःखम्' (अमर० १.२३४)। 'दुःखदानि यथा–पारतम्, आधिः, व्याधिः, मानच्युतिः, शत्रुः, कुभार्या, नैःस्वम्, कुग्रामवासः, कुस्वामिसेवनम्, बहुकन्याः, वृद्धत्वम्, परगृहवासः, वर्षाप्रवासः, भार्याद्वयम्, कुभृत्यः, दुर्हलकरणकृषिः' (कवि०)। पालि–दुक्खं (दुःखः)।

• खमिसति = क्षमा कर देगा। सँ.–क्षमिष्यते। पालि–खमति (क्षमते)।

• ने = हमें। सँ.–नः। पालि–नो।

• ए = जो। सँ.–यत्। पालि–यं।

• ममं निमित्तं = मेरे लिए। सँ.–मम निमित्तम्। पालि–ममं निमित्तं।

• अनने = उऋण। सँ.–अनृणः। पालि–अनणो।

• वेदितु = विदित करवा कर। सँ.–वेदयित्वा। पालि–वेदयति। (वेदयति)।

• धिति = धृति। सँ.–धृतिः। 'धृतिर्धारणधैर्ययोः' (अमर० ३.१२४७)। पालि–धिति।

• पटिना = प्रतिज्ञा। सँ.–प्रतिज्ञा। पालि–पटिञ्ञा।

• अचल = अटल। सँ.–अचला। पालि–अचलो (अचलः)।

• कटू = करके। सँ.–कृत्वा। पालि–कत्वा।

• कंमे चलितविये = कर्म करना चाहिए। सँ.–कर्म चरितव्यम्। पालि–कम्मं (कर्म)। चरति (चरति)।

• अतानं = अपने आप पर। सँ.–आत्मानम्। पालि–अत्तं, अतानं, आतुमानं।

• अनुकंपति = कृपा करता है। सँ.–अनुकम्पते। पालि–अनुकम्पति।

• सकलदेसाआयुतिके = सारे राष्ट्र में प्रतिनिधित्व वाला। सँ.–सकलदेशायुक्तिकः। (सकलम्–कलया सह वर्तमानम्। सर्वम्। निखिलम्। अखण्डम्।) (देशः–दिश्यते निर्दिश्यते इति। प्रदेशः। राष्ट्रम्।) आयुक्त-

व्यापारिते, ईषद्युक्ते, नियुक्ते, कर्म्माध्यक्षे, कुशले च। (शब्द०)। पालि–सकलो (सकलः)। देसो (देशः)। आयुत्तको (आयुक्तकः)।

• अलं = समर्थ। सँ.–अलम्। 'अलं निवारणे। अलंकरणसामर्थ्यपर्याप्तिष्ववधारणे।' (अनेकार्थ० १८०४-१८०५)। पालि–अलं।

• अनुचातुमासं = प्रत्येक चातुर्मास में। सँ.–अनुचातुर्मासम्। (चातुर्मासः–चतुर्षु मासेषु भवः।) पालि–अनु (अनु)। चतुमासं (चातुर्मासम्)।

लघु शिला अभिलेख - शब्द-विवेचन

लघु शिला : रूपनाथ अभिलेख

• सातिरकेकानि - (से) कुछ अधिक। सँ. - सातिरेकाणि। 'अतिरेकः - अतिशये, भेदे, प्राधान्ये आधिक्ये च।' (शब्द०)। पालि - सातिरेको (सातिरेकः)।

• अढतियानि - अढ़ाई। सँ. - अर्धतृतीयानि। [अर्धतृतीयम् - containing two and the third only half, i.e., two-and-a-half (V.S.Apte)] पालि - अड्ढतेय्यो, अड्ढतियो (अर्धतृतीयः)।

• व - वर्ष। सँ. - वर्षाणि। पालि - वस्सानि।

• य - जो। सँ. - यत्।

• सुमि - हूं। सँ. - अस्मि। पालि - अस्मि।

• प्रकास - प्रकट रूप से। सँ. - प्रकाशम्। ['प्रकाशोऽतिप्रसिद्धेऽपि' (अमर० ३.१३९२)]

• सके - उपासक। सँ. - शाक्यः। ['शाक्यः बुद्धे' (शब्द०)]। पालि - साकियो, सक्यो, सक्को।

• बाढि - खूब (अर्थात, डट कर)। सँ. - बाढम्। ['बाढं तीव्रं भृशं दृढम्' (अभिधान० ६.१५०५)]

• पकते - पराक्रम किया। सँ. - प्रक्रान्तः। पालि - पक्कन्तो।

• छवछरे - वर्ष। सँ. - संवत्सरः। ['संवत्सरो वत्सरोऽब्दो हायनोऽस्त्री शरत्समाः' (अमर० १.१२८)।] [संवसन्ति ऋतवो यत्र। हायनः। वर्षः।]। पालि - संवच्छरो।

• सघ उपेते - संघ हो गया। (शाब्दिक अर्थ – संघ की शरण चला गया) सँ. - सङ्घम् उपेतः। पालि - सङ्घं उपेतो।

• जंबुदिपसि - जंबुद्वीप में। सँ. - जम्बूद्वीपे। [जम्बुवृक्षचिह्नितो द्वीपः। सप्तद्वीपमध्ये स्वनामख्याते द्वीपभेदे। (शब्द०)]। पालि - जम्बुदीपो (जम्बुद्वीपः)।

• अमिसाः - असंबद्ध। विलग। सँ. - अमिश्राः। पालि - अ-मिस्सो।

• देवा - देवता। सँ. - देवाः। [दीव्यति आनन्देन क्रीडतीति। देवता।] ['देवस्तु नृपतौ तोयदे सुरे।' (अनेकार्थ० २.५३१)]। पालि - देवो।

• पक्रमसि - पराक्रम का। सँ. - प्रक्रमस्य। ['प्रक्रमः स्यादुपक्रमः' (अमर० ३.१९५६)]

• महतता - महान (व्यक्ति) द्वारा। सँ. - महता। पालि - महता।

• पापोतवे - प्राप्त किये जाने योग्य। सँ. - प्राप्तव्यम्। पालि - पप्पोति।

• खुदकेन - तुच्छ (व्यक्ति) द्वारा। सँ. - क्षुद्रकेन। ['क्षुद्रो हीनश्च दीनश्च।' (अभिधान०परिशिष्टः ३.९२]। पालि - खुद्दको (क्षुद्रकः)।

• पकमिनेना - पराक्रम करने वाले के द्वारा। सँ. - प्रक्रममाणेन। पालि - पक्कमन्तो (प्रक्रममाणः)।

• सकिये - संभव। सँ. - शक्यः। (समर्थनीये, साधयितुं योग्ये।)। पालि - सक्को।

• पिपुले - विपुल। सँ. - विपुलः। ['विपुलः पृथ्वगाधयोः' (अनेकार्थ० ३.१२८३)]। पालि - विपुलो।

• पा - भी। सँ. - अपि। पालि - पि।

• आरोधेवे - प्राप्त किया जाना। सँ. - आराधयितुम्। ['आराधनं साधने स्यादवासौ तोषणेऽपि च।' (अमर० ३.१२९८)]। पालि - आराधेति।

• सावने - घोषणा। सँ. - श्रावणम्।

• कटे - की गयी है। सँ. - कृतम्। पालि - कतं।

• उडाला - उदार। सँ. - उदाराः। ['उदारो दक्षिणो महान्' (अनेकार्थ० ३.१२२५)]। ['उदारो दातृमहतोः' (अमर० ३.१३६६)]। [उदार = दातरि, महति, सरले, दक्षिणे, गम्भीरे, असाधारणे च (शब्द०)]। पालि - उळारो (उदारो)।

• अता - सीमावर्ती लोग। सँ. - अन्ताः। ['अन्त्यश्चान्तः' (द्विरूप० ७)]। ['अन्तोऽवसानं सीमा च' (अभिधान० ४.९६२)]। ['अन्तो अततेः' (नि० ४.२५)]

• इय पकरा व - यह पराक्रम ही। सँ. - अयं प्रक्रमः एव।

• अपलधियेना - कम से कम। सँ. - अवरार्ध्यम् (अवरार्धे भवम्)। अवरार्ध - कम से कम भाग, कम से कम (सँस्कृत०)।

• दियढिय - डेढ़ गुना (ड्योढ़ा)। सँ. - द्वयर्धम्।

• वढिसत - बढ़ेगा। सँ. - वर्धिष्यते। पालि - वड्ढति।

• पवतिसु - चट्टानों पर। सँ. - पर्वतेषु। ['पर्वतः पर्ववान्' (नि० १.२०)] ['पर्वतो गिरिदेवर्ष्योः' (अनेकार्थ० ३.८७५)]। पालि - पब्बतो (पर्वतः)।

• लेखापेत - लिखा गया है। सँ. - लिखा गया है। पालि - लेखेति, लिखापेति।

• वालत - सुयोग (उपस्थित) होने पर। सँ. - वारतः। ['निवहावसरौ वारौ' (अमर० ३.१३३५)]। पालि - वारो।

• हध - यहां। सँ. - इह। पालि - इध।

• अथि - है। सँ. - अस्ति। पालि - अत्थि।

• सालाठभे - शिलास्तंभ। सँ. - शिलास्तम्भः। पालि - सिलत्थम्भो।

• लाखापेतवय त - लिखवाया (अर्थात, उत्कीर्ण करवाया) जाना चाहिए। सँ. - लेखायितव्यः इति।

• एतिना - इस। सँ. - एतेन। पालि - एतेन।

• वयजनेना - अभिव्यक्ति के अनुसार। सँ. - व्यञ्जनेन। पालि - व्यञ्जनं, ब्यञ्जनम्।

• यावतक - जितना। सँ. - यावत्कः। पालि - यावतको।

• तुपक - आपका। सँ. - युष्माकम्। पालि - तुम्हाकं।

• अहाले - अधिकारक्षेत्र। सँ. - आहारः।

• सवर - सब जगह। सँ. - सर्वत्र। पालि - सब्बत्थ, सब्बत्र।

• विवसेतवाय - (किसी अधिकारी को) भिजवाना चाहिए। सँ. - विवासयितव्यः।

• व्युठेना - प्रवास के समय। सँ. - व्युष्टेन। ['व्युष्टं कल्ये तथोषिते' (हारा० २५५)] ['व्युष्टं विभातम्' (अभिधान० २.१३९)]। पर्य्युषिते प्रभाते च। फले, दिवसे च न० (शब्द०)]

• २०० ५० ६ सत - २५६ प्रवास (रात्रि-विश्राम)। सँ. द्विषट्पञ्चाशद्रात्रि-शतम्।

• विवासा त - बीत चुके थे। सँ. - विवासाः इति।

लघु शिला : कोलकाता - बैराट अभिलेख

• मागधे = मगध का। सँ.-मागधः। (मगधस्य तद्वंशस्यापत्यम्। अथवा मगधेषु भवो मागधः।) 'मागधो मगधोद्भूते शुक्लजीरकबन्दिनोः। वैश्यतः क्षत्रियापुत्रे।' (अनेकार्थ० ३.९४६)। पालि-मागधो।

• अभिवादेतूनं = अभिवादन करके। सँ.-अभिवाद्य। पालि-अभिवादेति (अभिवादयति)।

• अपाबाधतं = निर्विघ्नता, स्वास्थ्य। सँ.-अपबाधताम्।' निर्बाधदुःखयोर्बाधः' (त्रिकाण्ड० ३.७७२)। पालि- अप- (अप-)। बाधा (बाधा)।

• फासुविहालतं = सुखविहारता। सँ.-सुखविहारताम्। (सुखं कस्मात्। सुहितं खेभ्यः।-नि० ३.१३)। 'सुखं त्रिदिवशर्मणोः' (अनेकार्थ० २.४४)। 'विहारस्तु परिक्रमः' (अमर० ३.११४६)। 'विहारस्तु जिनालये। लीलायां भ्रमणे स्कन्धे।' (अनेकार्थ० ३.१२०३)। पालि-फासुविहारो (सुखविहारः)।

• विदिते = मालूम है। सँ.-विदितम्। 'विदितं बुधिते श्रुते' (अनेकार्थ० ३.८९४)। पालि-विदितो (विदितः)।

• वे = आपको। सँ.-वः। पालि-वो।

• भंते = भदंतगण। सँ.-भदन्ताः। 'भदन्ताः सौगतादयः' (अभिधान० २.३३५)। पालि-भन्ते। (contracted form of भदन्ते - Childers).

• आवतके = जितनी। सँ.-यावत्कम्। पालि-यावतको (यावतकः)।

• हमा = मेरा। सँ.-मम। पालि-मम।

• बुधसि = बुद्ध में। सँ.-बुद्धे। पालि-बुद्धो (बुद्धः)।

• धंमसि = धर्म में। सँ.-धर्मे। (धर्मः-धरति लोकान्। ध्रियते पुण्यात्मभिरिति वा।) 'एक एव सुहृद्धर्मो निधनेप्यनुयाति यः। शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यत्तु गच्छति।' (हितोप०)। पालि-धम्मो, धम्मं (धर्मः)।

• संघसी = संघ में। सँ.-सङ्घे। 'सङ्घः सजातीयसमूहे, समूहे च' (शब्द०)। पालि-सङ्घो (सङ्घः)।

• गालवे = मान। सँ.-गौरवम्। (गुरोर्भावः। गुरुत्वम्। उत्कर्षः। आदरः।) पालि-गारवो (गौरवः)।

• चं = और। सँ.-च। पालि-च।

• प्रसादे = श्रद्धा। सँ.-प्रसादः। 'प्रसादस्तु प्रसन्नता' (अमर० १.८९)। 'स्यात्प्रसादोऽनुरागेऽपि' (अमर० ३.१२६४)। 'प्रसादः नैर्मल्ये, अनुग्रहे, काव्यगुणभेदे, स्वास्थ्ये, प्रसक्ते, देवनैवेद्ये, गुरुजनभुक्तावशिष्टे च' (शब्द०)। (प्र- ✓सद् से निष्पन्न; प्रसक्तिः)। पालि-पसादो।

• सुभासितेते = सुभाषित। तद्वचन। सँ.-सुभाषितम्। पालि-सुभासितानि (सुभाषितानि)।

• मयिया = मेरे द्वारा। सँ.-मया। पालि-मया।

• विसेया = देखा जाता है (अर्थात, उचित समझा जाता है)। सँ.-दृश्यते। पालि-दिस्सते, दिस्सति।

• सधंमे = सद्धर्म। सँ.-सद्धर्मः। पालि-सद्धम्मो।

• अलहंति = योग्य हूं। सँ.-अर्हामि। पालि-अरहति (अर्हति)।

• वातवे = बखान करने के लिए। सँ.-वक्तुम्। पालि-वत्तुं।

• धंमपलियायानि = धर्म-पर्याय। सँ.- धर्मपर्यायाः। 'पर्यायोऽवसरे क्रमे। निर्गमे द्रव्यधर्मे च।' (अनेकार्थ० ३.१०९३)।' पर्यायः-अनुक्रमे, प्रकारे, अवसरे, निर्गमे, द्रव्यधर्मभेदे समार्थबोधके शब्दे च।' (शब्द०)। पालि-धम्मो (धर्मः)। परियायो (पर्यायः)।

• विनयसमुकसे = विनयसमुकस। सँ.-विनयसमुत्कर्षः। पालि-विनयो (विनयः)। समुक्कंसो (समुत्कर्षः)।

• अलियवसाणि = अलियवसानि। सँ.-आर्यवासाः। पालि-अरियवासो।

• अनागतभयानि = अनागतभयानि। सँ.-अनागतभयानि। पालि-अनागतो (अनागतः)। भयं (भयम्)।

• मुनिगाथा = मुनिगाथा। सँ.-मुनिगाथा। पालि-मुनि (मुनिः)। गाथा (गाथा)।

• मोनेयसूते = मोनेयसूत। सँ.-मौनेयसूत्रम्। पालि-मोनेय्यं (मौनेयम्)। सुत्तं (सूत्रम्)।

• उपतिसपसिने = उपतिष्यप्रश्न। सँ.-उपतिष्यप्रश्नः। पालि-उपतिस्सो (उपतिष्यः= सारिपुत्र का नाम)।

• लाघुलोवादे = राहुल को उपदेश। सँ.-राहुलाववादः। 'अववादस्तु निर्देशो निदेशः शासनं च सः।' (अमर० २.७६२)। 'अववादस्तु निर्देशे निन्दाविश्रम्भयोरपि' (अनेकार्थ० ४.१५०९)। 'अववादः- निन्दायाम्, विश्वासे, आज्ञायाम्, अवालम्बने च।' (शब्द०)। पालि-राहुलो। ओवादो (अववादः)।

• मुसावादे = मुसावाद। सँ.-मृषावादम्। 'मृषा मिथ्या च वितथे' (अमर० ३.१३३)। (मृषा-मृष्यत इति। मिथ्या।)। मृषावादः-'मिथ्यावाक्ये यथा स्तेनेत्यादिवाक्यम्।' (शब्द०)। पालि-मुसा (मृषा)। वादो (वादः)।

• अभिकाळं = के बारे में। सँ.-अधिकृत्य। पालि-अधिकिच्च।

• भिखुसंघे = भिक्षु। सँ.-भिक्षुपादाः। पालि-भिक्खु (भिक्षुः)।

• भिखुनिये = भिक्षुणियां। सँ.-भिक्षुक्यः (अथवा भिक्षुण्यः)। भिक्षुक-पु. भिक्षोर्जीविनि (शब्द०)। पालि-भिक्खुनी (भिक्षुणी)।

• अभिखिनं = बार-बार। सँ.-अभीक्ष्णम्। (अभीक्ष्णम् अभिक्षणं भवति। अभीक्ष्णं प्रवर्तते:। प्रक्षुतः कालः।-नि० २.२५)। 'अभीक्ष्णं तु भृशं नित्यम्' (अनेकार्थ० ३.७८९)। 'अभीक्ष्णं पुनः पुनः। असकृन्मुहुः।' (अभिधान० ६.१५३१)। पालि-अभिक्खणं।

• सुनंतु = सुनें। सँ.-शृणुयुः। पालि-सुणन्तु।

• उपधालयेयू = धारण करें। सँ.-उपधारयेयुः। पालि-उपधारेति। (उपधारयति)।

• उपासिका = उपासिकाएं। सँ.-उपासिकाः। पालि-उपासिका (उपासिका)।

• एतंनि = इस। सँ.-एतेन। पालि-एतेन।

• अभिप्रेतं = अभिप्राय को। सँ.-अभिप्रेतम्।

• जानंतू = जानें। सँ.-जानन्तु। पालि-जानेय्य।

लघु शिला : ब्रह्मगिरि अभिलेख

• सुवंणगिरीते = सुवर्णगिरि से। सँ.-सुवर्णगिरितः। (गिरिः पर्वतः समुद्रीर्णो भवति- नि० १.२०)। 'सुवर्णं-सुष्ठु वर्णोऽस्य। स्वनामख्याते धातुभेदे।' (शब्द०)। 'स्वर्णं सुवर्णं कनकं हिरण्यं हेम हाटकम्। तपनीयं शातकुम्भं गाङ्गेयं भर्म कर्बुरम्॥' (अमर० २.९५१)। पालि-सुवण्णो (सुवर्णः)। गिरि (गिरिः)।

• अयपुतस = कुमार के। सँ.-आर्यपुत्रस्य। पालि-अय्यपुत्त (Woolner) अथवा अय्यो (आर्यः), पुत्तो (पुत्रः)।

• महामाताणं = महामात्रों के। सँ.-महामात्राणाम्। (महामात्रः-महती मात्रा मर्यादा परिमाणं यस्य। प्रधानः।)। 'महामात्राः प्रधानानि' (अमर० २.७४२)। महामात्र-पुँ. '.....मात्रा तु महतो येषां महामात्रास्तु ते स्मृताः।' प्रधानामात्ये।

(शब्द०)। पालि-महामत्तो (महामात्रः) = A king's minister or companion, a great noble at court (Childers).

- वचनेन = वचन से (अर्थात, हवाले से)। 'वचनं तु व्याहारो भाषितं वचः' (अभिधान० २.२४१)। पालि-वचनेन (= in the name of) (Childers).
- इसिलसि = इसिल (ऋषिल) में। सँ.-ऋषिले।
- आरोगियं = स्वास्थ्य (के बारे में)। सँ.-आरोग्यम्। (आरोग्यं-अरोगस्य भावः। रोगराहित्ये अनामये।-शब्द०)। पालि-आरोग्यं (आरोग्यम्)।
- .....सके = [उपा] सके। सँ.-उपासकः।
- संवछरें = वर्ष। सँ.-सँवत्सरः। (संवसन्ति ऋतवो यत्र। हायनः। वत्सरः।)। पालि-संवच्छरो, संवच्छरं।
- समाना = होते हुए। सँ.-समानाः। 'समानाः सत्समैके स्युः' (अमर० ३.१३००)। पालि-समानो (Particle present from अत्थि। Being. This interesting आत्मने form exists side by side with सन्तो, the equivalent of सत् and is in common use. पुट्ठो समानो = being asked, अरहा समानो = being an Arhat (Childers).
- मुनिसा = मनुष्य। सँ.-मनुष्याः। मनुष्यः-मनोरपत्यं। मानवे जातिभेदे। (शब्द०)। (मत्वा कर्माणि सीव्यन्ति, मनस्यमानेन सृष्टा वा। नि० ३.७)। पालि-मनुस्सो (मनुष्यः)।
- हीयं = निश्चय ही यह। सँ.-हि इदम्। पालि-हि (हि)। इदं (इदम्)।
- महात्पेनेव = महान व्यक्ति के द्वारा ही। सँ.-महात्मनैव। महान् आत्मा स्वभाव आशयो यस्य। महाशये। (शब्द०)।
- कामं = चाहने पर। स्वेच्छा से। सँ.-कामम्। 'कामं वाढेऽनुमतिरेतसोः' (अनेकार्थ० २.३२७)। पालि-कामं।
- पकमि....णेण = पक [ममि] णेण। सँ.-प्रक्रममाणेन।
- मै = मेरे। सँ.-मे। पालि-मे।
- पक..... = The Siddapura version reads पकमे होति (होतु at Sahasram). (Hultzch)
- मातापितिसु = माता-पिता की। सँ.-मातापित्रोः। पालि-मातापितरो (मातापितरौ)।

- सुसूसितविये = शुश्रूषा की जानी चाहिए। सँ.-शुश्रूषितव्यम्। पालि-सुस्सूसति (शुश्रूषते)।
- गुरुसु = गुरुजनों की। सँ.-गुरुषु। (गुरुः-गीर्यते स्तूयते ज्ञेयगन्धर्वमनुष्यादिभिः। गृणाति उपदिशतीति वा।) 'उपाध्यायः पिता ज्येष्ठभ्राता चैव महीपतिः। मातुलः श्वसुरस्त्राता मातामहपितामहौ। बन्धुर्ज्येष्ठः पितृव्यश्च पुंस्येते गुरवः स्मृताः।' 'मातामही मातुलानी तथा मातुश्च सोदरा। श्वश्रूः पितामही ज्येष्ठा धात्री च गुरवः स्त्रिषु।' पालि-गरु (गुरुः)।
- प्राणेसु = प्राणियों के प्रति। सँ.-प्राणेसु। पालि-पाणो (प्राणः)।
- दाढ्यितव्यं = (आदरभाव को) दृढ़ करना चाहिए। सँ.-द्रढयितव्यम्। पालि-दळ्हयति (द्रढयति)।
- सच्चं = सत्य। सँ.-सत्यम्। (सत्यं सत्प्रभवं भवति-नि० ३.१३) (सते हितं यत्।) (शब्द०)। पालि-सच्चं।
- धंमगुणा = धर्म-गुण। सँ.-धर्मगुणाः। पालि- तुलना करें - बुद्धगुणा = the attributes of Buddha (Childers).
- पवतितविया = व्यवहार में उतारने चाहिएं। सँ.-प्रवर्तयितव्याः। पालि-पवत्तेति (प्रवर्तयति)।
- अंतेवासिना = शिष्य द्वारा। सँ.-अन्तेवासिना। (अन्तेवासी-अन्ते विद्यामध्येतुमध्यापकसमीपे वसति। शिष्यः। छात्रः।) 'अन्तेवासी शैक्षः प्राथमकल्पिकः' (अभिधान० १.७९)। पालि-अन्तेवासी (अन्तेवासी)।
- आचरिये = आचार्य। सँ.-आचार्यः। 'अनुयोगकृदाचार्यः' (अभिधान० १.७८)। पालि-आचरियो।
- अपचायितविये = आदर किया जाना चाहिए। सँ.-अपचेतव्यः। पालि-अपचायितो (अपचायितः)=honoured (Childers)
- य....रहं = य [था] रहं। सँ.-यथार्हम्।
- पोराणा = पुरानी। सनातन। सँ.-पुराणी। 'पुराणे प्रतनप्रत्नपुरातनचिरंतनाः' (अमर० ३.१०९४)। पालि-पोराणो, पोराणको (पौराणः, पौराणकः)।
- पकिती = परंपरा। रीति। सँ.-प्रकृतिः। (प्रक्रियते कार्यादिकमनयेति।)। पालि-पकति।

• दीघावुसे = आयु बढ़ाने वाली। सँ.-दीर्घायुषे। [दीर्घायुस्, दीर्घायुष्य-long-lived (Apte)] (दीर्घं द्राघते-नि० २.१६)। 'दीर्घमायतम्' (अमर० ३.१०८६)। पालि-दीघो (दीर्घः)। आयु (आयुः)।

• कटिविये = करना चाहिए। सँ.-कर्तव्यम्। पालि-कत्तब्बं।

• चपडेन = चपड द्वारा। सँ.-चपडेन।

लघु स्तंभ अभिलेख - शब्द-विवेचन

लघु स्तंभ अभिलेख - सारनाथ

• देवा..... = देवा [नंपिय].....। सँ.-देवा [नांप्रियः].....।

• ए ल..... =

• ....पाट.....ये = ...पाट [लिपुत.....न सकि] ये। सँ.-..... पाट [लिखितुम्] ....न शक्यः।

• भेतवे = भेदन करने (अर्थात, फूट डालने) के लिए। सँ.-भेत्तुम्। 'भेदो विदारणं द्वैधे उपजापविशेषयोः' (अनेकार्थ० २.२४३)।

• सासने = आदेश। सँ.-शासनम्। 'निकृष्टस्य हितसाधनादौ प्रवर्त्तनम्।' (शब्द०)। पालि-सासनं।

• भिखुसंघसि = भिक्षुओं के संघ में। सँ.-भिक्षुसङ्घे। पालि-भिक्खुसङ्घो (भिक्षुसङ्घः)।

• भिखुनिसंघसि = भिक्षुणियों के संघ में। सँ.-भिक्षुणीसङ्घे। पालि-भिक्खुनीसङ्घो (भिक्षुणीसङ्घः)।

• विनंपयितविये = विशेष रूप से जानकारी में लाया जाना चाहिए। सँ.-विज्ञापयितव्यम्। पालि-विञ्ञापेति (विज्ञापयति)।

• हेदिसा = ऐसी। सँ.-ईदृशा। 'ईदृश् [श]- अस्येव दर्शनमस्य।' (शब्द०)। पालि-ईदिसो, ईरिसो (ईदृशः)। और ये भी - एदिसो, एरिसो।

• इका = एक। सँ.-एका। पालि-एका।

• तुफाकंतिकं = आपके पास। सँ.-युष्माकम् अन्तिके। 'अन्तिकं निकटम्' (त्रिकाण्ड० ३.५५५)। पालि-तुम्हाकं। अन्तिकं (अन्तिकम्)।

• हुवाति = हो। सँ.-भूयात्।

• संसलनसि = आने-जाने अथवा एकत्र होने के स्थान पर। सँ.-संसरणे। 'संसरणं त्वसंबाधचमूगतौ संसारे च समारम्भे नगरस्योपनिर्गमे' (अनेकार्थ० ४.१४६३-१४६४)। 'संसरणं-स्वादृष्टनिबद्धदेहस्वीकाररूपे संसारे, असंबाधसेनागमने, रणारम्भे, घण्टापथे, संगतौ च।' (शब्द०)। पालि-संसरणं (=transmigrating) (Childers)

• निखिता = (सुरक्षित) रखे। सँ.-निक्षिप्ता। (निक्षिप्त- न्यस्ते, स्थापिते-शब्द०)। पालि-निक्खित्तो (निक्षिप्तः)।

• उपासकानंतिकं = उपासकों के पास (लिए)। सँ.-उपासकानाम् अन्तिके। पालि-उपासको (उपासकः)। अन्तिकं (अन्तिकम्)।

• निखिपाय = रखो। सँ.-निक्षिपत। पालि-निक्खिपति (निक्षिपति)।

• अनुपोसथं = प्रत्येक उपवास के दिन। सँ.-अनूपवसथम्। पालि-अनु (अनु)। उपोसथ (उपवसथः)।

• यावु = आवें। सँ.-यायुः।

• विस्वंसयितवे = विश्वास प्राप्त करने के लिए। सँ.-विश्वासयितुम्। पालि-विस्ससति (विश्वसिति)।

• इकिके = प्रत्येक। सँ.-एकैकः। 'एकोऽन्यः केवलः श्रेष्ठः संख्या' (अनेकार्थ० २.१८)। पालि-एकमेको (एकैकः)=प्रत्येक। एकको (एककः)= alone, solitary (Childers)

• आजानितवे = पूरी तरह समझने के लिए। सँ.-आज्ञातुम्। पालि-आञ्ञातुं।

• आवते = जितना। सँ-यावत्कः। यावत्- यत्परिमाणमस्य। यत्परिमाणे। यावति। (शब्द०)। पालि-यावतको।

• आहाले = अधिकार-क्षेत्र। सँ.-आहारः।

• विवासयाथ = (संघभेदकों को) (उनके आवास से) बाहर निकलवा दें। सँ.-विवासयत।

• वियंजनेन = स्पष्ट लिखावट (के आधार पर)। सँ.-व्यञ्जनेन। व्यञ्जनं-विशेषेणाज्यते। (शब्द०)। 'व्यञ्जनं लाञ्छनं श्मश्रुनिष्ठानावयवेष्वपि' (अमर० ३.१२८९)। 'व्यञ्जनं श्मश्रुचिह्नयोः' (अनेकार्थ० ३.१००८)। 'व्यञ्जयन्ति प्रकटान् कुर्वन्त्यर्थानिति व्यञ्जनानि' (उवट)। पालि-व्यञ्जनं, ब्यञ्जनं (व्यञ्जनम्)।

• कोटविपवेसु = किलों (अर्थात, किलाबंदी किये हुए नगरों) में तथा जिलों में। सँ.-कोट्टविषयेषु। 'कोट्टदुर्गे पुनः समे' (अभिधान० ४.९७३)। 'विषय आश्रये' (अमर० ३.११४१)। 'विषयः-इन्द्रियगोचरे शब्दादौ, देशे च।' (शब्द०)। पालि-विसयो (विषयः)।

लघु स्तंभ अभिलेख - रुम्मिनदेई

• अतन = स्वयँ। सँ.-आत्मना। पालि-अत्तना।

• आगाच = आकर। सँ.-आगत्य। पालि-आगम्म, आगन्त्वा।

• महीयिते = पूजा की। सँ.-महीयितम्।

• बुधे = बुद्ध। सँ.-बुद्धः। 'बुद्धो ज्ञाते जिने बुधे' (त्रिकाण्ड० ३.७७१)। पालि-बुद्धो।

• सक्यमुनी = शाक्यमुनि। सँ.-शाक्यमुनिः। (शाक्यः-शकोऽभिजनोऽस्येति। यद्वा शाके शाकवृक्षच्छाये भवः स्थितः। बुद्धः। शाक्यमुनिः। सिद्धार्थः।) (मुनिः-मनुते जानाति यः इति। मौनव्रती। वाचंयमः। सत्यवाक्)। पालि- सक्यमुनि।

• सिला विगडभी चा = पत्थर की बहुत बड़ी दीवार। सँ.-शिला-विकटभित्तिका। 'शिला द्वाराधोदारु कुनटी दृषत्' (अनेकार्थ० २.५१८)। 'विकटं विपुलं बृहत्' (अभिधान० ६.१४३०)। (शिला-शिलतीति। उपला। पाषाणः। स्तम्भशीर्षम्। मनःशिला।)। पालि-सिला (शिला)। भित्ति (भित्तिः)।

• उसपापिते = खड़ा करवाया गया। सँ.-उच्छापितः। पालि-उस्सापेति (उच्छापयति)।

• भगवं = भगवान्। सँ.-भगवान्। 'जिने पूज्ये च भगवान्' (त्रिकाण्ड० ३.७२७)। पालि-भगवा।

• लुंमिनिगामे = लुंबिनी ग्राम। सँ.-लुम्बिनीग्रामः।

• उबलिके = कर-मुक्त। सँ.-उद्बलिकः।

• अठभागिये = अष्टभागी (अर्थात, मालगुजारी के रूप में उद्भिज्ज का आठवां भाग चुकाने वाला)। सँ.-अष्टभागी। 'भागो रूपार्धके भाग्यैकदेशयोः' (अनेकार्थ० २.५४)। 'भागः अंशे' (शब्द०)। (भागः-भज्यते इति। अंशः।)

लघु स्तंभ अभिलेख - निगली सागर

• चोदसवसाभिसितेन = अभिषेक के चौदह वर्ष हो चुकने पर। सँ.-चतुर्दशवर्षाभिषिक्तेन। पालि-चोद्दस, चुद्दस (चतुर्दश)। वस्सो (वर्षः)। अभिसित्तो (अभिषिक्तः)।

• कोनाकमनस = कनकमुनि का। सँ.-कनकमुनेः। पालि-कोणागमनो। (=name of one of the twenty-four Buddhas) (Childers).

• थुवे = स्तूप। सँ.-स्तूपः। (स्तूपः स्त्यायते संघातः-नि० १०.३३)। स्तूपः- राशीकृते मृत्तिकादौ संघाते, बले, निष्प्रयोजने च। (शब्द०)। पालि-थूपो।

• दुतियं वढिते = दूसरी बार बढ़ाया गया। सँ.-द्वितीयं वर्द्धितः। द्वितीय-द्वयोः पूरणे। द्वितीये भागे। (शब्द०)। 'वर्द्धितं छिन्नपूर्णयोः' (अनेकार्थ० ३.८८९)। पालि-दुतियं (द्वितीयम्)। वड्ढितो (वर्द्धितः)।

• .....साभिसितेन = [वीसति - व]साभिसितेन। सँ.-विंशतिवर्षाभिषिक्तेन।

• .....पापिते = [सिलाथभे च उस] पापिते। सँ.-[शिलास्तम्भः च उ-] त्थापितः।

स्तंभ अभिलेख - शब्द-विवेचन

देहली-टोपरा स्तंभ - प्रथम अभिलेख

• लाज = राजा ने। सँ.-राजा। (राजते शोभते इति। नरपतिः।) पालि-राजा।

• सड्ढवीसतिवसअभिसितेन = अभिषेक के २६ वर्ष हो चुकने पर। सँ.-पड्विंशतिवर्षाभिषिक्तेन। विंशतिः-द्वे दशती। अभिषिक्त- अभिषेक किया हुआ। राजतिलक किया हुआ। राजसिंहासन पर बैठा हुआ (सँस्कृत०)। पालि-छब्बीसति। छब्बीस। (षड्विंशति)। वस्सो (वर्षः)। अभिसित्तो (अभिषिक्तः)।

• हिदतपालते = इस लोक तथा परलोक का (सुख)। सँ.-इहत्यपारत्र्यम्। इहत्य-इह भवः। इहकालादिजाते। (शब्द०)। पारत्रिकं-परत्र भवं, हितं वा। परलोकहितकारके कर्म्मणि परलोकभवे च। (शब्द०)। पालि-इध (इह)। परत्थ (परत्र)।

• दुसंपटिपादये = प्राप्त करना कठिन है। सँ.-दुःसंप्रतिपाद्यम्।

• अंनत = के बिना। सँ.-अन्यत्र। अन्यत्र-व्यतिरेके विनार्थे च। (शब्द०)। पालि-अञ्ञत्र।

• अगाया = तीव्र। सँ.-अग्रयायाः (अथवा) अग्रायाः। (अग्रयः-अग्रे भवः। उत्तमः। प्रधानम्।)। अग्र-सबसे आगे का, सर्वोत्कृष्ट, सर्वप्रथम। (सँस्कृत०)। 'अग्रमग्रयमपि ख्यातम्' (द्विरूप० १९)। 'अग्रं पुरः प्रथमेऽधिके' (अनेकार्थ० २.३९८)। पालि-अग्गो (अग्रः)।

• धंमकामताया = धर्म-कामना से। सँ.-धर्मकामतायाः। 'कामोऽभिलाषः' (अभिधान० ३.४३१)। पालि-कामता (कामता)।

• पलीखाया = (कठोर) परीक्षा से। सँ.-परीक्षायाः। (परीक्षा-'दुष्टादुष्टत्वावलोचने प्रमाणेन वस्तुनिरूपणे'-शब्द०)। पालि-परिक्खा (परीक्षा)।

• सुसूयाया = (उत्कृष्ट) सेवा (आज्ञापालन) से। सँ.-शुश्रूषायाः। 'शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा' (अभिधान० २.३१०)। पालि-सुस्सूसा (शुश्रूषा)।

• भयेना = (निकट) भय से। सँ.-भयात्। (भयम्-विभेत्यस्मात् तत्। द.। त्रास:। भीति:। आतङ्क:।) 'भयं भीभीतिरातङ्कः आशङ्का साध्वसं दर:' (अभिधान० २.३०१)। पालि-भयं (भयम्)।

• उसाहेना = (परम) उत्साह से। सँ.-उत्साहात्। 'उत्साहो अध्यवसाय: स्यात्' (अमर० १.२११)। पालि-उस्साहो (उत्साह:)।

• धंमापेखा = धर्म की आवश्यकता। सँ.-धर्मापेक्षा। पालि-अपेक्खा, अपेक्खा (अपेक्षा)।

• सुवे सुवे = दिन प्रतिदिन। सँ.-श्व: श्व:। पालि-सुवे सुवे।

• वढिता = बढ़ा है। सँ.-वर्द्धिता। 'वर्द्धितं छिन्नपूर्णयो:' (अनेकार्थ० ३.८८९)। पालि-वड्ढितो (वर्द्धित:)।

• पुलिसा = (राज-)पुरुष। सँ.-पुरुषा:। पालि-पुरिसो (पुरुष:)।

• उकसा = उच्च (श्रेणी के)। सँ.-उत्कृष्टा:। पालि-उक्कट्ठो (उत्कृष्ट:)।

• गेवया = निम्न (श्रेणी के)। (शाब्दिक अर्थ-दीन। कातर।) सँ.-गेया:, ग्लेप्या:। (✓गेपृ, ✓ग्लेप् = tremble, be miserable) 'ग्लेप् दैन्ये' (धातुपाठ०) (३६६)। अथवा 'गेवृ (५०२)-ग्लेवृ (५०३)....सेवने' (= to serve).

• मझिमा = मध्यम (श्रेणी के)। सँ.-मध्यमा:। मध्यम- मध्यभवे। (शब्द०)। पालि-मज्झिमो (मध्यम:)।

• अनुविधीयंती = अनुसरण करते हैं। सँ.-अनुविदधति। पालि-अनुविधीयति (अनुविधीयते)।

• चपलं = चंचल (व्यक्ति) को। सँ.-चपलम्। (चपल:-चोपति मन्दं मन्दं गच्छति। तरल:। चञ्चल:।)। चपल-तरले, चञ्चले, क्षणिके, विकले, दुर्विनीते च। (शब्द०)। पालि-चपलो (चपल:)।

• समादपयितवे = प्रोत्साहित करने के लिए। सँ.-समादापयितुम्। पालि-समादपेति (समादापयति)।

• अंतमहामाता = अंतमहामात्र। सँ.-अन्तमहामात्रा:।

• पालना = पालन-पोषण। सँ.-पालनम्। पालि-पालनं (पालनम्)।

• विधाने = व्यवस्था करना। सँ.-विधानम्। 'विधानं हस्तिकवले प्रेरणेऽभ्यर्थने धने। चेतनोपायविधिषु प्रकारे वैरकर्मणि।' (अनेकार्थ० ३.१००७-१००८)। पालि-विधानं (विधानम्)।

• सुखियना = सुख पहुँचाना। सँ.-सुखीयनम्। पालि-सुखेति (सुखयति)।

• गो॥ = रक्षा करना। सँ.-गुप्ति:। 'गुप्तं रक्षितगूढयो:' (त्रिकाण्ड० ३.४००७)। पालि-गुत्ति।

देहली-टोपरा स्तंभ - द्वितीय अभिलेख

• किय चु = परंतु क्या (शाब्दिक अर्थ-'कितना')। सँ.-कियान् तु।

• अपासिनवे = पाप से दूर रहना। सँ.-अपास्रव:। (अप-न पाति रक्षति पलायते।) (आस्रव:-आ-✓सु से)। पालि-आसवो (आस्रव:)।

• कयाने = सत्कर्म करना। सँ.-कल्याणम्। (कल्याणं कमनीयं भवति-नि० २.३)। 'कल्याणं हेम्नि मङ्गले' (अनेकार्थ० ३.७९३)। पालि-कल्याणो, कल्लाणो।

• दया = दया (करना)। सँ.-दया। 'यत्नादपि परक्लेशं हर्तुं या हृदि जायते। इच्छा भूमिसुरश्रेष्ठ! सा दया परिकीर्तिता।' (शब्द०)। पालि-दया।

• दाने = दान (देना)। सँ.-दानम्। (दीयते इति। ददनम्। उत्सर्ग:। विहापितम्।) 'दानमुत्सर्जनं त्याग:' (अभिधान० ३.३८६)। पालि-दानं।

• सचे = सच (बोलना)। सँ.-सत्यम्। (सत्यं कस्मात्। सत्सु तायते। सत्यं सत्प्रभवं भवति-नि० ३.१३)। अथवा, सते हितं यत्। (शब्द०)। 'सत्यं सम्यक्समीचीनमृतं तथ्यं यथातथम्' (अभिधान० २.२६४)। पालि-सच्चं।

• सोचये = पवित्रता। सँ.-शौचम् (शुचेर्भाव:)। पालि-सोचेय्यं।

• चखुदाने = चक्षुदान। सँ.-चक्षुर्दानम्। (चक्षु:-चष्टे पश्यत्यनेनेति। दर्शनेन्द्रियम्। ज्योति:।)। पालि-चक्खु (चक्षु:)।

• दिने = दिया है। सँ.-दत्तम्। पालि-दिन्नं।

• दुपदचतुपदेसु = दो पैर वालों (दोपायों) और चार पैर वालों (चौपायों) पर। सँ.-द्विपदचतुष्पदेषु। द्विपद:-मनुष्ये, देवे, यक्षिणि, राक्षसे च। (शब्द०)। द्विपदं नाम मनुस्सा, पक्खजाता। चतुप्पदं नाम हत्थी अस्सा ओट्ठा गोणा गद्रभा पसुका। (पाराजिक० १.२.९२-९३)। चतुष्पद:-चत्वारि पदानि चरणा यस्य। गवादौ पशौ। पादशब्दस्य पाद्भावे चतुष्पादप्यत्र। (शब्द०)। 'चतुष्पदो गवादिषु' (अनेकार्थ० ४.१५१२)। पालि-दिपदो (द्विपद:)। चतुप्पदो (चतुष्पद:)।

• पखिवालिचलेसु = पक्षियों और जलचरों पर। सँ.-पक्षिवारिचरेषु। वारिचरः-वारिषु चरति। मत्स्ये जन्तुमात्रे। (शब्द०)। पालि-पक्खी (पक्षी)। वारि (वारि)।

• विविधे = नाना प्रकार के। सँ.-विविधः। (विभिन्ना विधा यस्य।) 'विविधस्तु बहुविधो नानारूपः पृथग्विधः' (अभिधान० ६.१४६९)। पालि-विविधो।

• अनुगहे = उपकार। कृपा। सँ.-अनुग्रहः। 'अनुग्रहोऽभ्युपपत्तिः' (अभिधान० ६.१५०८)। 'अनुग्रहः आनुकूल्ये' (शब्द०)। पालि-अनुग्गहो (अनुग्रहः)।

• आ पानदाखिनाये = प्राणदान देने तक। सँ.-आ प्राणदक्षिणायाः। 'प्राणास्तु जीविते' (अनेकार्थ० २.१६२)। पालि-आ (आ)। पाणो (प्राणः)। दक्खिणा (दक्षिणा)।

• चिलंथितिका = चिरस्थायिनी। सँ.-चिरस्थितिका। पालि-चिरट्ठितिको (चिरस्थितिकः)।

• संपटिपजीसति = सम्यक रूप से प्रतिपादन करेगा। सँ.-संप्रतिपत्स्यते। (सम्प्रतिपत्तिः-समं+प्रतिपद्यते। वाद्युक्तार्थविषयस्वीकरणे 'श्रुत्वाभियोगं प्रत्यर्थी यदि तं प्रतिपद्यते सा तु सम्प्रतिपत्तिः स्यात्' (शब्द०)।

• सुकटं = सत्कर्म। सँ.-सुकृतम्। 'सुकृतं पुण्ये, धर्मे, शुभे च' (शब्द०)। पालि-सुकतं, सुकटं।

• कछती = करेगा। सँ.-करिष्यति। पालि-करिस्सति।

देहली-चोपरा स्तंभ - तृतीय अभिलेख

• कयाननेव = भद्र कार्य ही। सँ.-कल्याणमेव। (कल्याणं कमनीयं भवति-नि० २.३)। 'कल्याणं हेम्नि मङ्गले' (अनेकार्थ० ३.७९३)। पालि-कल्याणं (कल्याणम्)। एव, येव, हेव (एव)।

• कटे = किया गया। सँ.-कृतम्। पालि-कतं।

• नो निन = जरा भी नहीं। सँ.-न मनाक्। (मनाक्-मन्यरो इति। अल्पम्। मन्दः।) 'मनाक्ईषदर्थे मन्दे च' (शब्द०)। पालि-नो (न)। मनं (मनाक्)।

• पापं = अभद्र कार्य। सँ.-पापम्। 'पापं-पाति रक्षति आत्मानमस्मात्' (शब्द०)। (पापः-पाति रक्षति अस्मादात्मानमिति अधमः। निकृष्टः। दुष्कृतम्।)। पालि-पापो (पापः)।

• आसिनवे = आस्रव। सँ.-आस्रवः (आ-√स्रु से निष्पन्न)। 'आदीनवास्रवौ दोषे' (अमर० ३.११५९)। आस्रव=पीड़ा, कष्ट, दुःख। बहाव। निकास। अपराध। (सँस्कृत०)। पालि-आसवो (आस्रवः)।

• नामा = विस्मयार्थक। सँ.-नाम। (अव्यय-नामयति। स्वीकारे, विस्मये, स्मरणे, सम्भावनायां, निन्दायां, प्राकाश्ये, विकल्पे, अलीके, कोपे च। (शब्द०)। पालि-नाम।

• दुपटिवेखे = कठिनाई से पहचान में आने वाला। सँ.-दुष्प्रत्यवेक्ष्यम्। पालि-पच्चवेक्खनं (प्रत्यवेक्षणम् = आत्म-निरीक्षण)।

• आसिनवगामीनि = क्लेश को प्राप्त कराने वाले। सँ.-आस्रवगामीनि। पालि-आसवो (आस्रवः)। Āsava is synonymous with Kilesa (Childers)

• चंडिये = प्रचण्डता। सँ.-चाण्ड्यम्। (चण्डः-चण्डते रुष्टो भवतीति। तीक्ष्णताविशिष्टः। अत्यन्तकोपनः।) प्रचण्डता का द्योतक पद्य-"थलं करेय्यमुदकं, उदकं पि थलं करे। यदिहं तस्स पकुप्पेय्यं, खणेन छारिकं करे।" (चरिया०-चम्पेय्यनागचरिया -२३)। पालि-चण्डो (चण्डः)।

• निठूलिये = क्रूरता। सँ.-नैष्ठुर्यम्। पालि-निट्ठुरो (निष्ठुरः)।

• कोधे = कोप। सँ.-क्रोधः। पालि-कोधो।

• माने = अभिमान। सँ.-मानः। पालि-मानो।

• इस्या = ईर्ष्या। सँ.-ईर्ष्या। (ईर्ष्यणम्। परोत्कर्षासहिष्णुता। अक्षान्तिः।)। पालि-इस्सा।

• कालनेन = (इस) कारण से। सँ.-कारणेन। (कारणम्-कार्यतेऽनेन। येन विना यन्न भवति तत्। हेतुः।) 'कारणं घातने हेतौ करणे' (अनेकार्थ० ३.७९५)। पालि-कारणं।

• पलिभसयिसं = गिरा दूं। सँ.-परिभ्रंशयिष्यामि। पालि-परिब्भस्सयिस्सं (परिभ्रंशयिष्यामि)।

• हिदतिकाये = इस लोक के लिए (कल्याणकारी)। सँ.-इहत्याय। (इहत्य-इह भवः। इहकालादिजातं।-शब्द०)

• इयंमन = यह दूसरा। सँ.-इदमन्यत्।

• पालतिकाये = परलोक के लिए (कल्याणकारी)। सँ.-पारत्रिकाय। [पारत्रिकं-परत्र भवं, हितं वा। परलोकहितकारके कर्म्मणि परलोकभवे च। (शब्द०)]। पालि-परत्थ (परत्र)।

देहली-टोपरा स्तंभ - चतुर्थ अभिलेख

• लजूका = रज्जुक (नाम के उच्च अधिकारी)। सँ.-रज्जुकाः।

• अभिहाले = अभियोग। सँ.-अभिहारः। 'अभिहारोऽभियोगे च चौर्ये संनहनेऽपि च।' (अमर० ३.१३४२)। अभिहारः-अपचिकीर्षया अभिगम्याक्रमणे, साक्षाच्चौर्ये, अभियोगे, कवचादिधारणे च। (शब्द०)। पालि-अभिहारो (=bringing, offering) (Childers)

• दंडे = सजा। सँ.-दण्डः। (दण्डयत्यपराधिनमनेनेति। यद्वा दाम्यति शान्तं करोत्यनेनेति। दमनम्। राज्ञां चतुर्थोपायः। 'दण्डः सैन्ये दमे यमे' (अनेकार्थ० २.१३४)। पालि-दण्डो।

• अतपतिये = अपने अधीन (अर्थात, अपने विवेक पर निर्भर)। सँ.-आत्मप्रत्ययः। 'प्रत्ययोऽधीनशपथज्ञानविश्वासहेतुषु' (अमर० ३.१३२१)। पालि-अत्त-(आत्म-)। पच्चयो (प्रत्ययः)।

• अस्वथ = आश्वस्त। निःशङ्क। सँ.-आश्वस्ताः। 'आश्वासो विस्रम्भो निःशङ्कता' (उपसर्गार्थ०-तृतीय खंड-पृ.५१८)। पालि-अस्सत्थो (आश्वस्तः)।

• अभीता = निर्भीक। सँ.-अभीताः। पालि-भीतो (भीतः)।

• पवतयेवू = प्रवृत्त हों। सँ.-प्रवर्तयेयुः।

• जानपदसा = राष्ट्र के। सँ.-जानपदस्य। (जानपदः-जनपदे भवः। जनपदः-जनस्य लोकस्य पदम् आश्रयस्थानं यत्र। जनः पदं वस्तु यस्येति वा। देशः। राष्ट्रम्।)। पालि-जानपदो (जानपदः)।

• उपदहेवू = उपलब्ध करावें। सँ.-उपदध्युः। पालि-उपधानं (उपधानम्)।

• अनुगहिनेवु = अनुग्रह करें। सँ.-अनुगृह्णीयुः। उदाहरण-'अभीक्ष्णमनुगृह्णाति धनधान्येन दुर्गतान्' (महाभा०-सभापर्व ५.७१)। पालि-अनुगण्हाति (अनुगृह्णाति)।

• सुखीयनदुखीयनं = सुख-दुःख के कारण। सँ.-सुखं दुःखं (च)। (सुखम्-सुखयतीति। सौख्यम्। निर्वृतिः।) (दुःखम्-दुःखयतीति। कष्टम्। दुःखदानि यथा-'पारतन्त्र्यम्, आधिः, व्याधिः, मानच्युतिः, शत्रुः, कुभार्या, देश्यम्, कुग्रामवासः, कुस्वामिसेवनम्, बहुकन्याः, वृद्धत्वम्, परगृहवासः, व्याधिवासः, भार्याद्वयम्, कुभृत्यः, दुर्हलकरणकृषिः'- कवि०।

• जानिसंति = जानेंगे। पता लगायेंगे। सँ.-ज्ञास्यन्ति। पालि-ञस्सति, जानिस्सति (ज्ञास्यति)।

• धंमयुतेन = धर्म-रत (व्यक्तियों की सहायता से)। सँ.-धर्मयुतेन। युतोऽन्विते' (अनेकार्थ० २.२०२)। पालि-धम्मो, धम्मं (धर्मः, धर्म)। युतो (युतः)।

• वियोवदिसंति = प्रेरित करेंगे। सँ.-व्यवदिष्यन्ति। (वि-अव-✓वद् से निष्पन्न)। पालि-ओवदति (अववदति)।

• लघंति = उत्सुक रहते हैं। सँ.-रंघन्ति (अथवा) रंघन्ते। ✓रघ् से (शब्द०)।

• परिचलितवे = आज्ञा पालन करने के लिए। सँ.-परिचरितुम्। पालि-परिचरति (परिचरति)।

• छंदंनानि = इच्छाओं का। सँ.-छन्दनानि। 'छन्दः पद्येऽभिलाषे च'-(अमर० ३.१४०६)। पालि-छन्दो (छन्दः)।

• चघंति = समर्थ हो सकेंगे। सँ.-शक्ष्यन्ति। पालि-सक्खिस्सति (शक्ष्यति)।

• वियताये = मेधावी। सुविचक्षण। सँ.-व्यक्तायै। 'व्यक्तः प्राज्ञेऽपि' (अमर० ३.१२३५)। पालि-व्यत्तो, व्यत्तो (व्यक्तः)।

• धातिये = धाय को। सँ.-धात्र्यै। 'धात्री स्यादुपमातापि' (अमर० ३.१३५०)। पालि-धाती (धात्री)।

• निसिजितु = सौंप कर। सँ.-निसृज्य। पालि-निस्सज्जित्वा।

• पलिहटवे = पालन-पोषण करने के लिए। सँ.-परिहर्तुम्। पालि-परिहरितुं।

• अविमना = प्रसन्नचित्त होकर। सँ.-अविमनसः। [विमनस्-'चिन्तादिना व्याकुलचित्ते।' (शब्द०)]। पालि-विमनो (विमनाः)।

• इछितविये = वांछनीय। सँ.-एष्टव्यम्।

• वियोहालसमता = व्यवहारसमता। सँ.-व्यवहारसमता। 'व्यवहारः स्थितौ पणे' (अनेकार्थ० ४.१६५०)। व्यवहर्तुं व्यवहारायाऽधिकरणे निर्णयाय। (उपसर्गार्थ०-तृतीय खंड-पृ.४३३)। पालि-वोहारो (व्यवहारः)। समता (समता)।

• सिय = हो। सँ. -स्यात्। पालि -सिया।

• दंडसमता = दण्डसमता। सँ. -दण्डसमता। (दण्डो ददतेर्धारयतिकर्मणः। दमनादिलीपमन्वयः। -नि० २.२)। पालि -दण्डो (दण्डः)। समता (समता)।

• आयुति = आदेश। सँ. -आयुक्तिः।

• बंधनबधानं = बांधों के। सँ. -बन्धनबद्धानाम्। बन्धनं -निगडादिना संयमन, को च। (शब्द०)। पालि -बन्धनं (बन्धनम्)। बद्धो (बद्धः)।

• मुनिसान = मनुष्यों के। सँ. -मनुष्याणाम्। 'मनोरपत्यं यत्। मानवे जातिभेदे।' (शब्द०)। 'मनुष्या मानुषा मर्त्या मनुजा मानवा नराः। स्युः पुमांसः पञ्चजनाः पुरुषाः पूरुषा नरः॥' (अमर० २.५४०)। पालि -मनुस्सो (मनुष्यः)।

• तीलितदंडानं = दंड-प्राप्त (व्यक्तियों) के। सँ. -तीरितदण्डानाम्।

• पतवधानं = मृत्युदंडप्राप्त (व्यक्तियों) के। सँ. -प्राप्तवधानाम्। (वधः -हननमिति। प्राणवियोगफलकव्यापारः। मारणम्। विशसनम्।) 'वधो हिंसकहिंसयोः' (अनेकार्थ० २.२५९)। पालि -पत्तो (प्राप्तः)। वधो (वधः)।

• योने = (विशेष) छूट। मोहलत। (गहनुमाई) सँ. -यौतकम्। (युतकाले विवाहकालेऽधिगतम्। विवाहकाले लब्धं धने।) (शब्द०)। 'यौतके दाय इत्यपि' (अभिधान०शेष ४२)

• दिंने = दी गयी है। सँ. -दत्तम्। पालि -दिन्नं।

• नातिका = संबंधी। सँ. -ज्ञातिकाः। (ज्ञातिः -जानाति छिद्रं कुलस्थितिञ्च। सपिण्डादिः। सगोत्रः। बान्धवः।) (ज्ञातिः संज्ञानात्- नि० ४.२१)। 'ज्ञातिः -पितरि पितृवंश्ये सपिण्डसकुल्यसमानोदकसगोत्रजरूपे एकगोत्रोत्पन्ने पितृव्यादौ' (शब्द०)। पालि -ञातयो (ज्ञातयः)।

• निझपयिसंति = (पुनर्विचार के लिए) ध्यान आकृष्ट करेंगे। सँ. -निध्यापयिष्यन्ति।

• जीवितायं = जीवन के लिए। सँ. -जीविताय। पालि -जीवितं (जीवितम्)।

• तानं = उनके। सँ. -तेषाम्। पालि -तेसं।

• नासंतं = न होने पर। सँ. -न सनू।

• दानं = दान। सँ. -दानम्। पालि -दानं।

• दाहंति = देंगे। सँ. -दास्यन्ति।

• उपवासं = उपवास। सँ. -उपवासम्। पालि -उपवासो (उपवासः)।

• निझपयिसं पि कालंसि = निरोध काल में भी। (अर्थात, कारावास की अवधि में भी)। सँ. निरुद्धेऽपि काले। पालि - निरुद्धो (निरुद्धः)। पि (अपि) = भी। कालं (कालः)।

• दानसंविभागं = दान का वितरण। सँ. -दानसंविभागः। पालि -दानं (दानम्)। संविभागो (संविभागः)।

देहली-टोपरा स्तंभ - पंचम अभिलेख

• जातानि = प्राणी। सँ. -जातानि। जातं समूहः। 'जातं व्यक्तीधजन्मसु' (विश्वप्र० ३.७०९)। दीक्षित - 'प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव'। पालि -जातं (जातम्)= kind, sort, class, multitude (Childers)

• अवध्यानि = अवध्य। सँ. -अवध्यानि। (अवध्यम् -वधमर्हति यत्, ततो नञ्समासः। मारणानर्हम्। वधायोग्यम्।) 'अवध्यमवधार्हे स्यादनर्थकवचस्यपि।' (अनेकार्थ० ३.१०७६)।

• यथा = वे हैं, जैसे -। सँ. -तानि यथा। पालि -सेय्यथा (तद्यथा)।

• सुके = शुक। सँ. -शुकः। (✓शुभ् दीप्तौ से) पक्षिविशेषः। कीरः। वक्रतुण्डः। चिमिः। प्रियदर्शनः। 'शुको व्यासजकीरयोः' (अनेकार्थ० २.३४)। पालि -सुको, सुवो।

• सालिका = सारिका। सँ. -सारिका। (सरति गच्छतीति। पक्षिभेदे।) 'आत्मनो मुखदोषेण बध्यन्ते शुकसारिकाः।' (सुभाषित)। पालि -सालिका।

• अलुने = अरुण। सँ. -अरुणः।

• चकवाके = चक्रवाक। सँ. -चक्रवाकः। (चक्र इत्याख्यया उच्यतेऽसौ। पक्षिविशेषः। (चक्रं चकतेर्वा, चरतेर्वा, क्रामतेर्वा - नि० ४.२७)। 'चक्रवाको रथाङ्गाह्वयनामकः' (अमर० २.५१८)। 'द्वन्द्वचारी चक्रवाकः' (त्रिकाण्ड० २.२८६)। पालि -चक्कवाको।

• हंसे = हंस। सँ. -हंसः। (हंसा हन्तेर्घन्त्यध्वानम् -नि० ४.१३)। 'हंसास्तु श्वेतगरुतः' (अमर० २.५१९)। (हन्ति सुन्दरं गच्छति। पक्षिविशेषः। श्वेतगरुत्।)। पालि -हंसो (हंसः)।

• नंदीमुखे = नंदीमुख। सँ. -नान्दीमुखः। (नन्दिमुख = पत्राटी - डल्हण)।

• गेलाटे = गेलाट। सँ. -गेलाटः।

• जतुका = जतुका। सँ.-जतुका। 'जतुका चर्मचटका' (अनेकार्थ० ३.६४९)। पालि-जतुका।

• अंबाकपीलिका = अंबाकपीलिका। सँ.-अम्बापिपीलिका। (अम्बा-√अम्ब से) (पिपीलिका-पेलतेर्गतिकर्मणः। नि० ७.१३)। 'अम्बा मातायां बाला स्यात्' (अमर० १.१९६)। 'पिपीलिका तु हीनाङ्गी' (अभिधान० ४.१२०७)। पालि-अम्मा (अम्बा)। किपिल्लिको (पिपीलिकः)।

• दळी = कच्छपी। सँ.-दुडिः। दुलिः। (दोलतीति। कमठी। कच्छपी।)। 'कमठी डुलिः' (अमर० १.२५९)। 'कच्छपी दुली' (अभिधान० ४.१३५३)। 'द्रुणी कूर्म्याम्' (अनेकार्थ० २.१५९)।

• अनठिकमछे = अस्थिविहीन मत्स्य। सँ.-अनस्थिकमत्स्यः। अस्थि - न० अस्यते। मांसाभ्यन्तरस्थे हाड़ इति। (शब्द०)। (मत्स्यः-माद्यन्ति लोका अनेनेति। जलजन्तुविशेषः। झषः। मच्छः।) 'मत्स्यो मीनो विकारश्च उषो वैसारिणोऽण्डजः। शकुलः पृथुरोमा च स सुदर्शन इत्यपि। रोहिताद्यास्तु ये जीवास्ते मत्स्याः परिकीर्तिताः।' (भाव०)। पालि-अट्ठि। (अस्थि)। मच्छो (मत्स्यः)।

• वेदवेयके = वेद-वेयक। सँ.-वेदवेयकः।

• गंगापुपुटके = गंगापुपुटक। सँ.-गङ्गापुपुटकः।

• संकुजमछे = संकुज मत्स्य। सँ.-शकुलमत्स्यः (मत्स्यः- माद्यन्तेऽन्योन्यं भक्षणाय- नि० ६.२७)। [शकुलः- मत्स्यभेदे (शउल) -शब्द०)]।

• कफटसयके = कछुआ तथा साही मछली। सँ.-कमठशल्यकौ। (कमठः-के जले मठति वसतीति। कच्छपः। कूर्मः।) 'कूर्मे कमठकच्छपौ' (अमर० १.२५६)। पालि-सल्लको (शल्यकः)।

• पंनससे = एक प्रकार की गिलहरी। सँ.-पर्णशशः।

• सिमले = बारहसिंघा। सँ.-सृमरः। मृगभेदे।

• संडके = सांड। सँ.-षण्डकः। 'षण्डो गोपतिः' (अमर० २.९१९)। 'शण्डः षण्डस्तथाख्यातः सण्डोऽपि त्रिविधो मतः।' (द्विरूप० ४)।

• ओकपिंडे = ओकपिंड। सँ.-ओकपिण्डः। (ओकः पक्षी)। ओके पिण्डो येषां ते (जानवर जो घरों में अपना भोजन पाते हैं) (जैसे, बिल्ली, चूहा, गोह और नेवला) (विलाल-मूसिक-गोधा-मुंगुसाः बुद्धघोष के अनुसार)।

• पलसते = गैंडा। सँ.-पलाशादः। पालि-पलासादो।

• [illegible]कपोते = श्वेत कपोत। सँ.-श्वेतकपोतः। (श्वेतः-श्वेतते इति। [illegible]) पालि-सेतो (श्वेतः)। कपोतो (कपोतः)। (कपोतः-को वायुः [illegible]स्य। पारावतः।)

• [illegible]कपोते = ग्राम कपोत। सँ.-ग्रामकपोतः। (ग्रामः- विप्रादिवर्णप्राया [illegible]रिखादिरहिता बहुजनवसतिः। संवसथः। हट्टादिशून्यवसतिः।) 'ग्रामः [illegible] स्वरे' (त्रिकाण्ड० ३.८४८)। पालि-गामो (ग्रामः)। कपोतो [illegible])।

• चतुपदे = चौपाये। सँ.-चतुष्पदः। 'चतुष्पदो गवादिषु' (अनेकार्थ० [illegible]२)। पालि-चतुप्पदो।

• पटिभोगं नो एति = उपयोग में नहीं आते। सँ.-परिभोगं नैति। [illegible]-परिभोगं (परिभोगम्)। नो (न)। एति (एति)।

• खादियती = खाये जाते। सँ.-खाद्यते। पालि-खज्जति।

• एळका = भेड़। सँ.-एडका। (एडः-इलतीति। यद्वा आ सर्वतः ईड्यते। [illegible]धिरः। एडकः। मेषः।) 'मेढ्रोरभ्रोरणोर्णायुमेषवृष्णय एडके' (अमर० २.९३३)। पालि-एळको (एडकः)।

• सूकली = सूकरी। सँ.-सूकरी। (सू-इत्यव्यक्तं शब्दं करोति। वराहे। वराहयोषिति स्त्री.।) 'शूकरः सूकरोऽपि च' (द्विरूप० ३)। पालि-सूकरो (सूकरः)।

• गभिनी = गाभिन। सँ.-गर्भिणी। (गर्भोऽस्त्यस्याम् इति। गर्भवती (सगर्भा)। (गर्भः-गर्भो गृभेः गृणात्यर्थे, गिरत्यनर्थानिति वा- नि० १०.२३)। पालि-गब्भिनी।

• पायमीना = दूध पिलाने वाली। सँ.-पाययन्ती (पयस्विनी इत्यर्थः)।

• अवधिय- प- तके = अवध्य हैं। (इनके) बच्चे। सँ.-अवध्याः। 'अवध्यमवधार्हे स्यादनर्थकवचस्यपि।' (अनेकार्थ० ३.१०७६)। पोतकाः। पालि-पोतको (पोतकः)।

• आसंमासिके = छः महीने तक के। सँ.-आषाण्मासिकाः। षाण्मासिक-न० षष्ठे मासे भवः। (शब्द०)। (मासा मानात्- नि० ४.२७)

• वधिकुकुटे = मुर्गों को बधिया करना। सँ.-वध्रिकुक्कुटः। (कुक्कुटः-कुका आदानेन कुटतीति। पक्षिविशेषः। कृकवाकुः। ताम्रचूडः। चरणायुधः।) 'कुक्कुटश्चरणायुधः' (अमर० २.५१३)। 'कुलालं कुक्कुटं प्राहुः' (हारा० ८६)। उवट का निर्वचन- कुत्सितं शब्दमसुरघ्नमसुराणां तनोतीति

कुक्कुटः।(अथवा) असुरज्ञां वाचमुपादाय क्व क्व असुरा एवं योऽटति असौ कुक्कुटः। पालि-कुक्कुटो (कुक्कुटः)।

• तुसे = भूसा। सँ.-तुषः। 'तुषस्तु धान्यत्वचि विभीतके' (अनेकार्थ० २.५६६)। 'तुषानलः कुकूलः स्यात्' (त्रिकाण्ड० १.७२)।

• सजीवे = जिसमें जीव हों। सँ.-सजीवः। (जीवः-जीवतीति। प्राणी।) 'जीवः पुनष्पुत्रौ' (त्रिकाण्ड० १.११९)। पालि-सजीवो (सजीवः)।

• झापेतविये = जलाया जाय। सँ.-दाहयितव्यः। (अथवा) क्षापयितव्यः। (√क्षै १ परस्मैपद-'क्षायति' के णिजन्त रूप 'क्षापयति' से निष्पन्न)।

• दावे = जंगल। सँ.-दावः। (दुनातीति)। 'दवदावौ वनानले' (अनेकार्थ० २.५२९)। पालि-दावो।

• अनठाये = व्यर्थ। सँ.-अनर्थाय। पालि-अनत्थाय।

• पुसितविये = पोषण किया जाय। सँ.-पोषितव्यः। पालि-पोसितव्वो।

• चातुंमासासु = चौमासों में। सँ.-चातुर्मासीषु। (चातुर्मासी-चतुर्षु मासेषु भवा।)। पालि-चतुमासं (चतुर्मासम्)।

• तिसाये = तैष (अथवा पौष) माह की। सँ.-तिष्यं। 'तिष्यः पुष्ये कलिद्रुमे' (अमर० ३.१३२०)।

• पुनमासियं = पूर्णिमा पर। सँ.-पौर्णमास्याम्। पौर्णमासी-पूर्णो मासोऽस्यां वर्तते इति। पूर्णिमा। 'पौर्णमासी तु पूर्णिमा' (अनेकार्थ० ४.१७०२)। पालि-पुन्नमा (पूर्णिमा)।

• चादुदसे = चौदस को। सँ.-चतुर्दशे। (चतुर्दश-चतुरधिका दश।-शब्द०)। पालि-चातुद्दसो (चतुर्दशः)।

• पंनदसे = पंचदशी को। सँ.-पञ्चदशे। पालि-पन्नरसो (पञ्चदशः)।

• पटिपदाये = प्रतिपदा को। सँ.-प्रतिपदि। (प्रतिपद्यते उपक्रम्यते पक्षोऽनयेति। पक्षारम्भके तिथौ।) 'प्रतिपत्संविदि तिथौ' (अनेकार्थ० ३.९३५)। पालि-पटिपदा (प्रतिपद्, प्रतिपदा)।

• धुवाये = निश्चित रूप से। सँ.-ध्रुवम्। (ध्रुवति स्थिरीभवतीति। निश्चितम्।)। पालि-धुवं (ध्रुवम्)।

• अनुपोसथं = उपवास के दिन। सँ.-अनुपवसथम्। पालि-उपोसथो (उपवसथः)।

• मछे = मछली। सँ.-मत्स्यः। 'मत्स्ये मच्छोऽथ तन्तुणे' (अभिधान०शिला १२१)। पालि-मच्छो।

• विकेतविये = बेचना चाहिए। सँ.-विक्रेतव्यः। पालि-विक्केय्यो (विक्रेयः)।

• नागवनसि = हस्तिवन में। सँ.-नागवने। 'नागो मतङ्गजे सर्पे पुंनागे नागकेसरे'। क्रूराचारे नागदन्ते मस्तके वाहिरेऽपि च।' (अनेकार्थ० २.८८-४९)। पालि-नागवनं (नागवनम्)।

• केवटभोगसि = मछुआरों के तालाब में। सँ.-कैवर्त्तभोगे। (कैवर्तः-केऽम्बुनि वर्तते। वर्णसङ्करजातिविशेषः। धीवरः। 'निषादो मार्गवं सूते दाशं नौकर्म जीविनम्। कैवर्तमिति यं प्राहुरार्यावर्तनिवासिनः॥' (मनु० १०/३४)। 'कैवर्ते दाशधीवरौ' (अमर० १.२५०)। (भोग=property)। पालि-केवट्टो (कैवर्त्तः)। भोगो (भोगः)।

• जीवनिकायानि = जीवसमुदाय। सँ.-जीवनिकायाः। (जीवः-जीवतीति। प्राणी।) (निकायः-निचीयते इति। संहतानां समुच्चयः।) निकायः-समानधर्मप्राणिसङ्घे, निवासे च। (शब्द०)। तुलना करें-'देवनिकायानां' (महाभा० १.१२३.४५)। पालि-जीवो (जीवः)। निकायो (निकायः)।

• हंतवियानि = मारे जाने चाहिएं। सँ.-हन्तव्याः। पालि-हन्तव्वो, हनितब्बो (हन्तव्यः)।

• अठमीपखाये = हर पक्ष की आठवीं को। सँ.-अष्टमीपक्षे। 'पक्षस्तु मासार्धे ग्रहसाध्ययोः' (अनेकार्थ० २.५६८)। 'पक्षान्ती पञ्चदश्यौ द्वे' (अमर० १.११५)। पालि-अट्ठमियं पक्खस्स।

• पुनावसुने = पुनर्वसु के दिन। सँ.-पुनर्वसौ। 'पुनर्वसुः स्यान्नक्षत्रे कात्यायनमुनावपि' (अनेकार्थ० ४.१७०२)। पालि-पुनव्वसु (पुनर्वसुः)।

• सुदिवसाये = शुभ दिनों में। सँ.-सुदिवसे। ('सुदिनं प्रशस्तदिवसे'-शब्द०।)

• गोने = बैल (अथवा सांड)। सँ.-गौः। (गच्छतीति। यद्वा गच्छत्यनेनेति वृषस्य यानसाधनत्वात् स्त्रीगव्या दानेन स्वर्गगमनसाधनत्वाच्च उभयोरपि दानेन स्वर्गगमनत्वाद्वा तथात्वम्। वस्तुतस्त्वयं रूढ एव शब्दः, यदुक्तम्-'रूढा गवादयः प्रोक्ताः०'। पालि-गो (गौः)।

• नीलखितविये = वधिया किया जाना चाहिए। सँ.-निर्लक्षयितव्यः।

• अजके = बकरे। सँ.-अजकः। पालि-अजो (अजः)।

• अस्वसा = घोड़े। सँ.-अश्वस्य। पालि-अस्सो (अश्वः)।

• लखने = दागना। सँ.-लक्षणम्। (लक्ष्यते ज्ञायतऽनेनेति। चिह्नम्।) 'लक्षणं लक्षचिह्नयोः' (अनेकार्थ० ३.८२०)। पालि-लक्खणं।

• अंतलिकाये = अंतराल में। सँ.-अन्तरे। पालि-अन्तरे।

• पंनवोतीति = पच्चीस। सँ.-पञ्चविंशतिः। 'विंशतिः द्वे दशती'।

• बंधनमोखानि = बंधन से रिहाई। सँ.-बन्धनमोक्षाः। (बन्धनम्-बध्यतेऽस्मिन्निति। कारागारम्।) (मोक्षः-मोक्ष्यते दुःखमनेन। मुक्तिः)। 'मोक्षो निःश्रेयसे वृक्षविशेषे मोचने मृतौ' (अनेकार्थ० २.५७३)। पालि-बन्धनं (बन्धनम्)। मोक्खो (मोक्षः)।

देहली-टोपरा स्तंभ - षष्ठ अभिलेख

• दुआडसवसअभिसितेन = अभिषेक के बारह वर्ष हो चुकने पर। सँ.-द्वादशवर्षाभिषिक्तेन। द्वादशन्-पुं. द्वौ च दश च द्वयधिका वा दश। (शब्द०)। पालि-बारस (द्वादश)। वस्सो (वर्षः)। अभिसित्तो (अभिषिक्तः)।

• लोकसा = लोगों के। सँ.-लोकस्य। (लोकः-लोक्यतेऽसौ। भुवनेषु जनेषु च।-शब्द०)। पालि-लोकस्स।

• से = जिससे। सँ.-येन।

• अपहटा = अवज्ञा न करने वाला। सँ.-अप्रहर्ता। पालि-पहारो (प्रहारः)।

• धंमवडि = धर्म में पुष्टता। सँ.-धर्मवृद्धिम्। ('वृद्धिः समृद्धौ अभ्युदये, सम्पत्तौ, समूहे च।'-शब्द०)।

• पापोवा = प्राप्त करे। सँ.-प्राप्नुयात्। पालि-पप्पोति (प्राप्नोति)।

• पटिवेखामि = ध्यान देता हूं। सँ.-प्रत्यवेक्षे। पालि-पच्चवेक्खति। (प्रत्यवेक्षते)।

• पतियासंनेसु = जो निकट हैं। सँ.-प्रत्यासन्नेषु। (प्रत्यासन्न-अतिनिकटस्थे-शब्द०)।

• अपकठेसु = जो दूर हैं। सँ.-अपकृष्टेषु। पालि-अपकड्ढति (अपकर्षति)।

• किमं = ऐसा क्यों? सँ.-किम्। 'किं प्रश्ने कुत्सितेऽपि च' (अनेकार्थ०-१.७७५)। पालि-किं।

• अवहामी = प्रात कराता हूं। सँ.-आवहामि। पालि-आवहति (आवहति)।

• पेखामि = विधान करता हूं। सँ.-विदधामि। पालि-विदहति (पेखति)।

• हेवं = ऐसे ही। सँ.-एवमेव। 'एवौपम्ये परिभवे ईषदर्थेऽवधारणे' (अनेकार्थ० १८१६)। पालि-एवमेव।

• सवनिकायेसु = सभी वर्गों का। सँ.-सर्वनिकायेषु। 'सर्वं समस्तमन्यूनं सकलं समम्' (अभिधान० ६.१४३३)। निकायः-समानधर्मप्राणिसङ्घे। निकायः सङ्घसङ्घयोः' (अनेकार्थ० ३.१०८९)। 'स्यान्निकायः पुञ्जराशौ' (अमर० २.५३८)। पालि-सब्बो (सर्वः)। निकायो (निकायः)।

• अतना = स्वयं। सँ.-आत्मना। पालि-अत्तना।

• पचूपगमने = (लोगों तक) पहुँचना। सँ.-प्रत्युपगमनम्।

• मोखमते = मुख्य बात। सँ.-मुख्यमतम्। मुख्य-त्रि. मुखे आद्ये भवः यत्। प्रथमकल्पे, श्रेष्ठे च। (शब्द०)। 'मतं तु संमतेऽर्चिते' (अनेकार्थ० २.१४८)। पालि-मोक्खो (मौख्य)।

देहली-टोपरा स्तंभ - सप्तम अभिलेख

• अतिकंतं अंतलं = अतीत काल में। सँ. - अतिक्रान्तम् अन्तरम्। ['अति-पूजायाम्, उत्कर्षे, अतिक्रमणे, अतिशये च।' (शब्द०)] ['अन्तरं मध्ये विनार्थे तादर्थ्ये विशेषेऽवसरेऽवधौ।' (अनेकार्थ० स्वाभावकाशयोः। ३.१११४-१११५)]। पालि - अतिक्कन्तो (अतिक्रान्तः)। अन्तरं (अन्तरम्)।

• हुसु = हुए। सँ. - अभूवन्।

• इछिसु = चाहते थे। सँ. - ऐषिषुः।

• धंमवढिया वढेया = धर्म की वृद्धि के साथ बढ़ें। सँ. - धर्मवृद्ध्या वर्द्धेत। ['वृद्धिः समृद्धौ अभ्युदये, सम्पत्तौ, समूहे च।' (शब्द०)] पालि - धम्मो (धर्मः)। वड्ढि, वुद्धि (वृद्धिः)। वड्ढति (वर्द्धते)। [इसी प्रकार के पालि में कतिपय अन्य प्रयोग - सुखेन सुखितो होति। पामोज्जेन पमोज्जितं। अधिट्ठितं अधिट्ठानं। लाभं लभामि सब्बत्थ। उपोसथं उपवसिस्सं। इत्यादि।]

• अनुलुपाया = अनुरूप। सँ. - अनुरूपया। पालि - अनुरूपो (अनुरूपः)।

• एतं = इस विषय में। सँ. - अत्र। पालि - एत्थ।

• हुया = हुआ (अर्थात, लगा)। सँ. - अभूत्।

• किनसु = कैसे। सँ. - केनस्वित्। पालि - केन'स्सु।

• अनुपटिपजेया = (धर्म का) अनुसरण करें। सँ. - अनुप्रतिपद्येत। पालि - पटिपज्जति (प्रतिपद्यते)।

• कानि = किनको। सँ. - कान्।

• अभ्युंनामयेहं = अभ्युन्नत करूं। ऊंचा उठाऊं। सँ. - अभ्युन्नामयेयम्।

• धंमसावनानि = धर्मोपदेश। सँ. - धर्मश्रावणानि।

• सावापयामि = सुनवाता हूं। सँ. - श्रावयामि। पालि - सावेति, सुणापेति (श्रावयति)। ['परियत्ति']

• धंमानुसथिनि = धर्माचरण। सँ. - धर्मानुशिष्टीः। [अनुशिष्टिः - आदेश, शिक्षण, आज्ञा, विचारपूर्वक कर्त्तव्याकर्त्तव्य का निरूपण। (सँस्कृत०)]। पालि - धम्मो (धर्मः)। अनुसिट्ठि (अनुशिष्टिः)।

• अनुसासामि = सिखलाता हूं। सँ. - अनुशास्मि। पालि - अनुसासति (अनुशास्ति)। ['पटिपत्ति']

• सुतु = सुन कर। सँ. - श्रुत्वा। पालि - सुत्वा।

• आनपितानि = आज्ञप्त हैं। सँ. - आज्ञप्ताः।

• य.....सा (=यथा पुलिसा)। सँ. - य(था पु)रुषाः।

• पलियोवदिसंति = प्रचार (प्रेरित) करेंगे। सँ. - पर्यवदिष्यन्ति। ['परि-अव-√वद्' से निष्पन्न]। पालि - ओवदति।

• पवियलिसंति = प्रसार करेंगे। सँ. - प्रविस्तारयिष्यन्ति। पालि - वित्थारिस्सन्ति (विस्तारयिष्यन्ति)।

• अनुवेखमाने = देखते हुए। सँ. - अनुवीक्षमाणेन।

• धम्मथंभानि = धर्मस्तंभ। सँ. - धर्मस्तम्भाः। ['स्तम्भः स्थूणायाम्' (शब्द०)]। पालि - थम्भो (स्तम्भः)।

• मगेसु = मार्गों पर। सँ. - मार्गेषु। ['मार्गः मार्ग्यते संक्रियते पादेन, मृग्यते गमनायान्विष्यते इति वा।' पन्थाः।]। पालि - मग्गो (मार्गः)।

• निगोहानि = वट-वृक्ष। सँ. - न्यग्रोधाः। ['न्यग्रोधः - न्यक् रुणद्धि इति।' वटवृक्षः। 'न्यग्रोधो वटपादपे' (अनेक० ३.९४५)]। पालि - निग्रोधो (न्यग्रोधः)।

• लोपापितानि = लगवाये हैं। सँ. - रोपिताः। [रोपित - वृक्षादेर्जननाय कृताङ्कुरारोपणे। (शब्द०)। पालि - रोपितो (रोपितः)। रोपापेति (= to cause to be planted or sown - Childers)

• छायोपगानि = छाया देने वाले। सँ. - छायोपगाः। ['छाया सूर्यप्रिया कान्तिः प्रतिबिम्बमनातपः'। (अमर० ३.१३३१)]। पालि - छाया (छाया)। उपगो (उपगः)।

• होसंति= होंगे। सँ.- भविष्यन्ति। पालि - हेस्सति (भविष्यति)।

• अंबावडिक्या= आम के बाग। सँ.- आम्रवाटिकाः। आम्रे रसालो माकन्दः कामाङ्गः पिकबान्धवः। वनपुष्पो शवश्चूतः परपुष्टमदोद्भवः॥ मधुदूतो मधुफलः सुफलो मदिरासखः। वसन्तपादपोऽसौ तु सहकारोऽतिसौरभः॥ (निघण्टु० १.१२०-१२१)। 'वाटीपुष्पाद्वृक्षाच्चासौ क्षुद्रारामः प्रसीदिका' (अभिधान० ४.१११३)। [वाटीशब्दः पुष्पवृक्षाभ्यामन्वेति।]। पालि - अम्बो (आम्रः)।

• अढकोसिक्यानि= आधे-आधे कोस पर (अवस्थित)। सँ.- अर्द्धक्रोशकानि। क्रोश - पुं. अष्टसहस्रहस्तमाने। मतान्तरे सहस्रहस्तमाने। (शब्द०)। पालि - अद्धो, अड्ढो (अर्द्धः)। कोसो (क्रोशः)।

• उदुपानानि= कुवें। सँ.- उदपानानि। (उदपानम् - उदकं पीयतेऽस्मिन्। कूपः।) 'उदपानं कूपसमीपस्थे खाते क्षुद्रजलाधारे' (शब्द०)। तुलना करें - 'निर्जलेषु च देशेषु खनयामासुत्तमान्। उदपानान् बहुविधान् वेदिकापरिमण्डितान्' (रामा०)। पालि - उदपानो (उदपानः)।

• खानापापितानि= खुदवाये गये। सँ.- खानितानि। पालि - खानेति, खनापेति (खानयति)।

• निंसिढया= विश्रामस्थल (जैसे विश्रामगृह, चबूतरे)। सँ.- निषद्याः। निषद्या - निषीदन्त्यस्यां जनाः। पण्यविक्रयशालायां (हाटचाला) हट्टे, क्षुद्रखट्वायाञ्च (शब्द०)। पालि - निसज्जा (निषद्या) = sitting session (Childers)

• कालापिता= बनवाये गये। सँ.- कारिताः। पालि - कप्पितो (कल्पितः)।

• आपानानि= प्याऊ। सँ.- आपानानि। आपानं - आ सम्भूय पिबन्त्यत्र।

• पटीभोगाये= उपभोग (सुख) के लिए। सँ.- प्रतिभोगाय। पालि - पटिभोगो (प्रतिभोगः)।

• ल.....एस= ल[हुके चु] एस। सँ.- ल[घुकः तु] एषः।

• सुखायनाया= (सांसारिक) सुख पहुँचाने वाले कार्यों से। सँ.-सुखीयनेन।

• पुलिमेहि= पूर्ववर्ती। सँ.- पूर्वैः। पालि - पुब्बे (पूर्वे)।

• लाजीहि= राजाओं द्वारा। सँ.- राजभिः। पालि - राजूहि।

• ममया= मेरे द्वारा। सँ.- मया। पालि - मया।

• सुखयिते= सुखी बनाया गया। सँ.- सुखितः। पालि - सुखेति (सुखयति)।

• धंमानुपटीपती= धर्म के अनुसार आचरण। सँ.- धर्मानुप्रतिपत्तिम्। 'प्रतिपत्तिश्चित्रवृत्तिप्राप्तिप्रागल्भ्यगौरवे' (त्रिकाण्ड० ३.७१८)। पालि - पटिपत्ति (प्रतिपत्तिः)।

• आनुगहिकेसु= कल्याणकारी (कार्यों) में। सँ.- आनुग्रहिकेषु। पालि - अनुग्गहो (अनुग्रहः)।

• वियापटासे= नियुक्त हैं। सँ.- व्यापृताः। व्यापृत - व्यापारयुक्ते (शब्द०)।

• पवजीतानं= प्रव्रजितों के। सँ.- प्रव्रजितानाम्। 'प्रव्रजितः - संन्यासिनि' (शब्द०)। पब्बजितो (प्रव्रजितः)।

• गिहियानं= गृहस्थियों के। सँ.- गृहस्थानाम्। (गृहस्थः - गृही)। 'गृहस्थः - गृहेषु दारेषु तिष्ठति अभिरमते' (शब्द०)। 'गृहस्थः स्नातको गृही' (अभिधान० ३.८०८)। पालि - घरावासो (गृहावासः)।

• सव.....डेसु= सव[पासं]डेसु। सँ.- सर्वपाषण्डेषु।

• संघटसि= संघ के कार्यों में। सँ.- सङ्घार्थे। सङ्घः - सजातीयसमूहे, समूहे च। (शब्द०)। 'अर्थो हेतौ प्रयोजने' (अनेकार्थ० २.२२४)। पालि - सङ्घो (सङ्घः)। अत्थे (अर्थे)।

• होहंति = होंगे। सँ. - भविष्यन्ति। पालि - हेस्सति (भविष्यति)।

• हेमेव = इसी प्रकार। सँ. - एवमेव। पालि - एवमेव।

• बाभनेसु = ब्राह्मणों में। सँ. - ब्राह्मणेषु। 'ब्राह्मणो विप्रे' (अनेकार्थ० ३.८२३)। पालि - ब्राह्मणो (ब्राह्मणः)।

• आजीविकेसु = आजीविकों में। सँ. - आजीविकेषु। पालि - आजीवको, अजीवको (आजीवकः, अजीवकः)।

• निगंठेसु = निर्ग्रंथों में। सँ. - निर्ग्रन्थेषु। 'निर्ग्रन्थः - निर्गतो ग्रन्थेभ्यः। क्षपणके, दिगम्बरे, बौद्धभेदे, द्यूतकारे, मुनिभेदे च। निर्धने, मूर्खे, निःसहाये, निर्वेदं गते च।' (शब्द०)। 'नग्नाटकनिर्ग्रन्थकभदन्तदिगम्बरा नग्ने' (हारा० ११५)। 'निर्ग्रन्थो निःस्वमूर्खयोः' (अनेकार्थ०)। पालि - निगण्ठो (निर्ग्रन्थः)।

• पटिविसिटं = प्रत्येक प्रकार की विशेषता के अनुसार। सँ. प्रतिविशिष्टम्।

• ते..... माता = ते [ते महा]माता। सँ. - ते [ते महा]मात्राः।

• मुखा = मुख्य (अधिकारी)। सँ. - मुख्याः। मुख्य - मुखे आद्ये भवः यत्। प्रथमकल्पे, श्रेष्ठे च। (शब्द०)। पालि - मुख्यो (मुख्यः)।

• दानविसगसि = दान के वितरण में। सँ. - दानविसर्गे। विसर्गः - दाने, त्यागे,.....(शब्द०)। पालि - दानं (दानम्)। विस्सज्जनं (विसर्जनम्)।

• देविनं = रानियों के। सँ. - देवीनाम्। पालि - देवी (देवी)।

• ओलोधनसि = अंतःपुर में। सँ. - अवरोधने। (अवरोधः = राजस्त्रीगृहम्)। 'अन्तःपुरं स्यादवरोधनम्' (अमर० २.३०९)। पालि - ओरोधो (अवरोधः)।

• आकालेन = प्रकार से। सँ. - आकारेण। 'आकारस्त्विङ्ग इङ्गितम्' (अभिधान० ६.१५१३)। पालि - आकारेन।

• तुठायतनानि = तुष्टिप्रद (कार्य)। सँ.- तुष्ट्यायतनानि। (तुष्टिः सन्तोषे। 'अकृतार्थस्य लोकस्य कृतार्थोऽस्मीति या मतिः।' - शब्द०)। पालि - तुट्ठि (तुष्टिः)। आयतनानि (आयतनानि)।

• पटी..... = पटी[पादयंति] सँ. - प्रतिपादयन्ति।

• दिसासु = प्रांतों में। सँ. - दिशासु। पालि - दिसा (दिशा, दिट्)।

• दालकानं = पुत्रों के। सँ. - दारकाणाम्। 'तनयो दारकः सुतः' (अभिधान० ३.५४२)। 'दारको भेदके पुत्रे' (अनेकार्थ० ३.६५६)। पालि - दारको (दारकः)।

• देविकुमालानं = देवीकुमारों के। सँ. - देवी-कुमाराणाम्। (कुमारः - कौ पृथिव्यां मारयति दुष्टान्। राजकुमारः।) अथवा (कुमारयति क्रीडति इति। पञ्चवर्षीयबालकः)। 'कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां च रक्षणम्' (मनु० ७/१७५)। पालि - देवी (देवी)। कुमारो (कुमारः)।

• धंमापदानठाये = धर्मसंबंधी उत्तम कार्यों की (बढोतरी) के लिए। सँ. - धर्मापदानार्थाय। 'अवदानं कर्म वृत्तम्' (अमर० ३.११३३)। 'अवदानमितिवृत्ते खण्डने शुद्धकर्मणि' (अनेकार्थ० ४.१५२८)। अपदानं - शोधने, (प्रशस्ये) कर्मणि अवदानमप्यत्रार्थे। (शब्द०)। अपदान = सदाचरण, विशुद्ध आचरण। महान या उत्तम काम, सर्वोत्तम कर्म। सम्यक पूर्ण किया हुआ कार्य। अवदान = पवित्र या शास्त्रविहित वृत्ति। संपादित कार्य। शूरता या गौरवपूर्ण कोई कार्य। टुकड़े-टुकड़े करने की क्रिया, किसी अनोखी कहानी का कोई दृश्य। पराक्रम। वीरणमूल। (सँस्कृत०) (अपदानम् - अपदायति

परिशुध्यति येन कर्मणा)। पालि - धम्मो (धर्मः)। अपदानं (अवदानम्)। अत्थाय (अर्थाय)।

• साधवे = भलाई। सँ. - साधवम् (साधुत्वं साधुता वा)।

• प.....स = पि[यद]सि। सँ. - प्रि [यद] र्शी।

• यानि कानिचि = जो कोई। सँ. - यानि कानिचित्। पालि - यानि (यानि)। कानि (कानि)।

• ममिया = मेरे द्वारा। सँ. - मया। पालि - मया।

• अनुपटीपंने = अनुसरण किया। सँ. - अनुप्रतिपन्नः। 'प्रतिपन्नस्तु विज्ञातेऽङ्गीकृतेऽपि च।' (अनेकार्थ० ४.१५५३)। पालि - पटिपन्नो (प्रतिपन्नः)।

• अनुविधियंति = कर रहे हैं। सँ. - अनुविदधति।

• मातापितिसु = माता-पिता की। सँ. - मातापितृषु। (माता - मान्यते पूज्यते या सा। जनयित्री। जननी।) (पिता - पाति रक्षत्यपत्यं यः। उत्पादकः। तातः। जनकः।) 'पितरौ मातापितरौ मातरपितरौ पिता च माता च)। (अभिधान० ३.५६०)। पालि - मातापितरो (मातापितरौ, मातरपितरौ)।

• सुसुसाया = शुश्रूषा से। सँ. - शुश्रूषया। 'शुश्रूषाराधनोपास्तिवरिवस्यापरीष्टयः' (अभिधान० ३.४९७)। पालि - सुस्सूसा (शुश्रूषा)।

• गुलुसु = गुरुओं की। सँ. - गुरुषु। (गुरुः - गिरत्यज्ञानं गृणाति उपदिशति वा धर्मम्)। 'गुरुर्धर्मोपदेशकः' (अभिधान० १०७७)। पालि - गरु (गुरुः)।

• वयोमहालकानं = वयोवृद्धों की। सँ. - वयोमहल्लकानाम्। पालि - वयो (वयः)। महल्लको (महल्लकः)।

• कपनवलाकेसु = दीन-हीनों के प्रति। सँ. - कृपण-वराकेषु। 'कृपणः दीने। वराकः अवरे, शोचनीये च।' (शब्द०)। पालि - कपणो (कृपणः)। वराको (वराकः)।

• देवानंपिय.....यदसि = देवानंपिये [पि] यदसि। सँ. - देवानांप्रियः [प्रि]यदर्शी।

• दुवेहि = दो (प्रकार) से। सँ. - द्वाभ्याम्। पालि - द्वीहि।

• धंमनियमेन = धर्म-नियमन से। सँ. - धर्मनियमेन। 'नियमो व्रतमस्त्री' (अमर० २.७१६)। 'नियमो निश्चये व्रते' (त्रिकाण्ड० ३.८५१)। 'नियम'

व्याप्तिज्ञायां निश्चये यत्नणे व्रते' (अनेकार्थ० ३.१०६६)। पालि - धम्मो (धर्मः)। नियमो (नियमः)।

• निझतिया = ध्यान से। सँ. - निध्यात्या। पालि - निज्झानं (निध्यानं)।

• लहु = अल्प महत्त्व का। सँ. - लघुः। 'लघ्वसारं ह्रस्वं चार्वगुरु द्रुतम्' (अनेकार्थ० २.६९)। पालि - लहु।

• वहुक..... = वहुका[नि]। सँ. - वहुका[:]।

• अनालंभाये = अ-वध के लिए। सँ. - अनालम्भाय। आलम्भः, आलम्भनं - पकड़ना। स्पर्श करना। चीरना, फाड़ना। यज्ञ में वलिदान के लिए पशु का वध करना, यथा 'अश्वालम्भं, गवालम्भं'। (सँस्कृत०)। पालि - आरम्भो (आरम्भः)।

• पुतापुपोतिके = पुत्रों-प्रपौत्रों (के शासन तक टिकने वाली)। सँ. - पौत्र-प्रापौत्रिकी। 'पुत्रौ पुत्रश्च दुहिता च' (अभिधान० ३.५६०)। 'प्रपौत्रः - प्रगतः कारणतया पौत्रम्। पौत्रस्य पुत्रे।' (शब्द०)। पालि - पुत्तो (पुत्रः)।

• चंदमसुलियिके = (यावत्) चंद्रदिवाकर (टिकने वाली)। सँ. - चान्द्रमःसौर्यिकी। पालि - चन्दिमसूरिया (= the sun and moon) (Childers)

• हिदतपालते = इहलोक और परलोक। सँ. - ऐहत्यपारत्र्यम्।

• आलधे = प्राप्त। सँ. - आलब्धम्। पालि - लद्धो (लब्धः)।

• सतविसतिवसाभिसितेन = अभिषेक के सत्ताईस वर्ष हो चुकने पर (अथवा) सत्ताईस वर्षों से अभिषिक्त। सँ. - सप्तविंशतिवर्षाभिषिक्तेन।

• धंमलिबि = धर्मलिपि। सँ. - धर्मलिपिः। 'अक्षरन्यासे लिपिर्लिबिः' (अभिधान० ३.४८४)। पालि - लिपि (लिपिः)।

• लिखापापिता = लिखवायी गयी है। सँ. - लेखिता। पालि - लेखेति, लिखापेति (लेखयति)।

• एतं = इसके बारे में। सँ. - एतत्।

• अत = जहां। सँ. - यत्र। पालि - यत्थ।

• अथि = हैं। सँ. - सन्ति।

• सिलाथंभानि = शिलास्तंभ। सँ. - शिलास्तम्भाः। 'शिला द्वाराधोदारु कुन्टी वृषत्' (अनेकार्थ० २.५१८)। 'स्तम्भः स्थूणायाम्' (शब्द०)। पालि - सिलात्थम्भो (शिलास्तम्भः)।

• सिलाफलकानि = शिलाफलक। सँ. - शिलाफलकानि। पालि - सिला (शिला)। फलकं (फलकम्)।

गुहा अभिलेख - शब्द-विवेचन

गुहा अभिलेख - बराबर गुहा

प्रथम अभिलेख

- निगोहकुभा = न्यग्रोध गुफा। सँ.–न्यग्रोधगुहा। (न्यग्रोधः–न्यक् रुणद्धि इति। वटवृक्षः।) 'वटे वैश्रवणावासो न्यग्रोधो बहुपाद्ध्रुवः।' (निघण्टु० ४१) [वैश्रवण=कुबेर]। (गुहा – ✓गुह् से) पर्वतादेर्गह्वरम्। बिलम्। पालि–निग्रोधो (न्यग्रोधः)। गुहा (गुहा)।
- दिना = (दान में) दी गयी। सँ.–दत्ता। पालि–दिन्नो (दत्तः)।
- आजीविकेहि = आजीविकों को। सँ.–आजीविकेभ्यः। पालि–आजीवको (आजीवकः)।

द्वितीय अभिलेख

- खलतिकपवतसि = खलतिक पर्वत पर। सँ.–खलतिकपर्वते। [खलतिक–✓स्खल् से। पालि– खलति=to stumble (Childers)]। पब्बतो (पर्वतः)।

तृतीय अभिलेख

- एकुनवीसतिवसाभिसिते = अभिषेक के उन्नीस वर्ष हो चुकने पर। सँ.–एकोनविंशतिवर्षाभिषिक्तः। पालि–एकूनवीसं, एकूनवीसति (एकोनविंशतिः)।
- जलघोसागमथात = वर्षा (से बचाव) के लिए। सँ.–जलघोषागमार्थतः। 'घोषः शब्दाभीरनिवासयोः' (त्रिकाण्ड० ३.९९१)। 'घोषः कांस्ये स्वने गोपघोषकाभीरपल्लिषु' (अनेकार्थ० २.५६५) 'घोषः–घोषन्ति गावोऽत्र। आभीरपल्ल्याम्। ध्वनौ, अम्बुदनादे च। (शब्द०)। 'आगमस्त्वागतौ शास्त्रे' (अनेकार्थ० ३.१०६०)। (जलम्–जलति जीवयति लोकान्। जलति आच्छादयति भूम्यादीनिति वा। पानीयम्।) (घोषः–घोषन्ति शब्दायन्ते गावो यस्मिन्। ध्वनिः।)। पालि–जलं (जलम्)। घोसो (घोषः)। आगमो (आगमः)। अत्थाय (अर्थाय)।
- सुपिये = अति सुंदर। सँ.–सुप्रिया। (प्रियः–प्रीणातीति। हृद्यः।)
- ख..... = ख [लतिकपवतसि]। सँ.–खलतिकपर्वते।